चल हंसा उस देश
जहाँ साहेब का वासा है...

साहेब बन्दगी
सत्यनाम

सत्यनाम है सार बूझो सन्त विवेक करी।
उतरो भवजल पार सत्गुरू का उपदेश यहीं।।

सद्गुरू नितिन साहेब जी

चल हंसा उस देश जहाँ साहेब का वासा है...

लेखक :

सर्व भगत समाज

सर्व भगत समाज

केरू गांव, जैसलमेर हाईवे रोड़
जिला-जोधपुर, राजस्थान

अनुक्रमणिका

चल हंसा उस देश जहाँ साहेब का वासा है...

पुस्तक-भूमिका : परमपिता परमात्मा सद्गुरू कबीर साहेब जी, मदनसाहेब जी, वैरागसाहेब जी, नितिन साहेब जी के शुभाशीर्वाद से समस्त जगत के प्राणियों के जीवोद्धार के लिए कबीर साहेब द्वारा निर्दिष्ट सारशब्द द्वारा भक्ति-मुक्ति प्राप्त की जा सकती है, जिसको समझाने के लिए परमपूज्य ज्ञानविभूति नितिन साहेब जी द्वारा निशदिन सत्संग व नामदीक्षा कार्यक्रम गांव-गांव, शहर-शहर जाकर अथक प्रयास करके जीवों का कल्याण कर रहे हैं और उन्हें वास्तविक और यथार्थ भक्ति मार्ग सारशब्द का ज्ञान देकर सत्पथ और मुक्ति पथ पर अग्रसर कर रहे हैं। उनके इस अमूल्य ज्ञान को आम लोगों तक सुलभ करने के लिए सत्संग को सार रूप में प्रस्तुत करने के लिए, कबीर साहेब के मूल ज्ञान को जन-जन तक पहुंचाने के लिए एक लघु प्रयास **"चल हंसा उस देश जहां साहेब का वासा है"** पुस्तक के माध्यम से आप बुद्धिजीवी और विवेकी भगत समाज के कर कमलों में समर्पित करते हैं, आशा ही नहीं अपितु हमें पूर्ण विश्वास है कि हमारा लघु प्रयास आपजी के जीवन में भक्ति-मुक्ति का अलौकिक प्रकाश करके आपको भक्तिपथ पर अग्रसर करेगा और आपके अमूल्य जीवन को लाभान्वित करेगा। इसी शुभ संकल्प के साथ साहेब बंदगी। सत्यनाम।

अर्थात उस सतगुरू सारशब्द परमात्मा के सामने त्रिदेव, छह शास्त्र अठारह पुराण कुछ भी नहीं ठहर सकते हैं।

3. सुरत शब्द योग क्या है? :

कबीर साहेब कहते हैं कि

शब्द बिना सुरत आंधरी कहो कहां को जाय।
द्वार न पावै शब्द का फिर-फिर भटका खाय।।
सुरत फंसी संसार में वांसे पड़गी दूर।
सुरत बांध स्थिर करो आठो पहर हजूर।।

संसार में प्राणी स्वकर्मानुसार-प्रारब्ध, संचित, संचीयमान (क्रियमाण) जन्म लेता है तो उसकी सुरत मूलमालिक सारशब्द परमात्मा से बिछुड़कर संसार में फंस जाती है, अब कोई सारशब्द भेदी सतगुरू उसकी सुरत को आठों पहर उस सारशब्द परमात्मा में मिला दे तो उसका जन्म-मृत्यु का चक्कर हमेशा के लिए छूट सकता है। उस सुरत को शब्द बिना अंधी बताया गया है। शब्द के बारे में कबीर साहेब जी कहते हैं कि

शब्द-शब्द हर कोई कहे वह तो शब्द विदेह।
जिव्हा पर आवे नहीं निरख परख कर लेय।।
शब्द-शब्द बहुत अंतरे सारशब्द मथ लीजै।
कहे कबीर सारशब्द बिन धृग जीवन सो जीजै।।

इन साखियों (साक्षियों) में कबीर साहेब कह रहे हैं कि उस सारशब्द की हर कोई चर्चा करता है लेकिन वह शब्द विदेह है, उसका सुमिरन न मुख से, न स्वांसों से, न हीं नाद-अनहद की विधि से किया जाता है, इसलिए गुरू से उस शब्द को निरख-परखकर ही लेना चाहिए क्योंकि वह शब्द अकह, अनाम, अडोल, अबोल है। इसके बारे में गरीबदास जी कहते है कि-

गरीब ज्ञान अमान अडोल अबोल है सतगुरू शब्द सेरी पिछानी।
दास गरीब कबीर सतगुरू मिल्या आन स्थानरोप्या छुड़ानी।।

क्योंकि उस सार शब्द बिना जीव की किसी भी उपाय से मुक्ति नहीं है। जब तक हमें हमारा निजनाम नहीं मिलेगा तब तक हम मुक्त नहीं हो सकते। साहेब कहते हैं कि-

तीन गुणन की भक्ति में भूल पडयों संसार।

कहे कबीर निजनाम बिना कैसे उतरेपार।।

अधर द्वीप जहां गगन गुफा में है निज वस्तु सारा।

ज्योति स्वरूपी अलख निरंजन धरता ध्यान हमारा।।

इस भेद को समझाने वाले परमपूज्य ज्ञानविभूती संत नितिन साहेब जी इस पुण्यभूमि भारत धरा पर मौजूद हैं।

4. क्षर, अक्षर, निःअक्षर क्या है ? : गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में दो पुरूषों का उल्लेख है- एक क्षर (नाशवान) और दूसरा अक्षर (अविनाशी) अब यहां क्षर से तात्पर्य नाशवान शरीर से हैं, जिसे ओ३म् भी कह सकते हैं। अक्षर यहां जीव को कहा गया है, जिसे संतमत में सोहं से भी जाना जाता है। गरीबदास जी कहते हैं कि

ओ३म् काया मर-मर जाए।

सोहं फिर-फिर गोता खाए।।

गीता अध्याय 15 के श्लोक 17 में जिसको उत्तम पुरूष कहा है जिसे सत् कहा है, वहीं निःअक्षर, सारशब्द परमात्मा कहा गया है, जो लिखने पढ़ने व बावन अक्षरों से परे है। जिसके लिए दादू साहेब जी कहते हैं कि

जहां पवन की गमी नहीं रवि शशि उदय न होय।

निःअक्षर स्वांसा रहित ज्ञान लेय तुम सोय।।

कबीर साहेब जी कहते हैं कि

लिखा पढ़ की है नहीं कहन सुनन की बात।

दूल्हा-दुल्हन मिल गए तो फीकी पड़ी बारात।।

यहां सुरत दुल्हन को शब्द (परमात्मा) रूपी दूल्हे से मिलने की बात कही

गयी है। गुरू ग्रंथ साहिब में नानक देव कहते हैं कि

क्षर से परे अक्षर से पारा।

वाहि पुरूष का करो विचारा।।

नानक एको सिमरिए जनम-मरण दुःख जाय।

दूजा काहे सिमरिए, जन्मे और मर जाय।।

कबीर साहेब जी कहते है कि

हाड चाम लहू नहीं मेरे जाने सत्यनाम उपासी।

तारण तरण अभय पद दाता मैं हूं कबीर अविनाशी।।

पांच तत्व का धड़ नही मेरा जानू ज्ञान अपारा।

सत्यस्वरूपी नाम साहेब का सोई नाम हमारा।।

यहां पर कबीर साहेब जी स्वयं को सत्यनाम उपासक बता रहे हैं, जिससे सिद्ध है कि सत्यनाम, सरनाम, सारशब्द उस परमपिता परमात्मा कबीर साहेब जी के ही पर्यायवाची है। चारों युगों में उनके नाम-

सतयुग में सत् सुकृत कह टेरा, त्रेता नाम मुनिन्द्र मेरा।

द्वापर में करूणामय कहलाया, कलियुग नाम कबीर धराया।

सत् सुकृत का अर्थ अविनाशी पुण्यशाली अर्थात सनातन पुण्यात्मा। मुनिन्द्र का अर्थ मुनियों का राजा अर्थात मौन रहने वाले (उन्मुन रहनी), मुनियों के स्वामी, शांतचित्त। करूणामय, करूणा, दया से युक्त।

गरीब-पानी से पैदा नहीं, नहीं स्वांसा शरीर।

अन्न आहार करते नहीं, तांका नाम कबीर।।

अर्थात श्रेष्ठ शरीर, कायावीर।

कक्का केवल नाम है, ब बा ब्रह्म शरीर।

र रा सबमें रम रहा, वांका नाम कबीर।।

जिसे कुरान में हक्का कबीर कहा है। खुदा शब्द का अर्थ है जो ख़ुदब ख़ुद बना है जिसे दूसरा कोई बनाने वाला नहीं है। खुद में आना, स्वयं को जानना।

कहता है खुदा, जो खुद से जुदा, जानो वो अधूरा है।

दिखला दे जो खुद में खुदा, उसे ही पीर कहते हैं।

बेखबर की खबर कोई बाखबर (जानकार) आत्मज्ञानी संत ही दे सकता है जिसने उस परमात्मा को जाना है।

कबीर कबीर क्या करे, तू खोज आपन शरीर।

दसों इन्द्रिया बस में कर, तू आपे आप कबीर।।

कबिरा, कबीर और कबीर साहेब क्रमशः जीव, सीव, पीव अवस्था का नाम है जिससे सारशब्द भेदी सतगुरू ही जोड़ता है। अधिक जानकारी के लिए नितिन साहेब जी के सत्संग प्रवचन यू ट्यूब चैनल कहत कबीर सुनो भाई साधो नितिनदास से सत्संग सुनिए।

5. संतवाणी में सतलोक (सारशब्द) महिमा :

गरीबदासजी-

स्वर्ग सात असमान पर भटकत है नर मूढ।

खालिक तो खोया नहीं इसी महल में ढूंढ।।

सुन्न बेसुन्न से अगम है पिंड ब्रहमांड से न्यार।

शब्द समाना शब्द में अविगत वार न पार।।

गरीब ऐसा सतगुरू हम मिल्या अलल पंख की जात।

काया माया वहां नहीं, नहीं पांच तत्व का गात ।।

गरीब ऐसा सतगुरू हम मिल्या सुरत सिंधु के मांहि।

शब्द स्वरूपी अंग है पिंड प्राण बिन छांई।।

कबीर साहेब जी-

वैर करें सोई दुःख पावे सुरत शब्द मिल जाई।

कहे कबीर हम जम दल पेल्या सतगुरू लाख दुहाई।।

लोक अलोक शब्द है भाई।

जिन जाना तिन संशय जाई।।

सत्यनाम हृदय धर्यो भयो पाप को नाश।
जैसे चिनगी अग्नि की पड़ी पुराने घास।।
हद के तो ताला पड्या बेहद पड़ी जंजीर।
हद बेहद से ही परे रटना रटे कबीर।।

दादू जी-

और संत सब कूप है केते सरिता नीर।
दादू अगम अपार है दरिया सत्य कबीर।।

मलूकदासजी-

जपो रे मन केवल नाम कबीर।
दास मलूक सलूक कहत हैं खोज खसम कबीर।।

नामदेवजी-

अजर अमर अविनाशी देखें सिंधु सरोवर नहाया।
शब्द ही शब्द भया उजियारा सतगुरू भेद बताया।
आप में आप को पाया ना कहीं गया न आया।
ज्यों कामिनी कंठ का हीरा आभूषण बिसराया।
संग की सहेली ने भेद बताया ना कहीं गया न आया।
जैसे मृग नाभि कस्तूरी वन वन डोलत धाया।
का कहूँ वा सुख की महिमा ज्यों गूंगा गुड खाया
नामदेव कहे गुरू कृपा से ज्यों का त्यों दर्शाया।।

नानकदेवजी-

तेरो एक नाम तारे संसार, ऐहीआस ऐही आधार।
वेद कतेब सिमरत सब सांसत, इन पढ़या मुक्त न होई।
इक अक्खर जो गुरूमुख जापै, तिस की निर्मल सोई।

रामदासजी-

राम निकट नैड़्या रहिया मैं फिरिया परदेश।
रामदास घट में मिल्या सतगुरू के उपदेश।।

पुनः कबीर साहेब जी कहते हैं कि-

घट घट मेरा सांईया सूनी सेज न कोय।
बलिहारी उस घट की जिस घट प्रगट होय।।
ज्यों तिल माही तेल है ज्यों चकमक में आग।
तेरा सांई तुझमें है जाग सके तो जाग।।
कस्तूरी कुंडल बसे मृग ढूंढे बन मांही।
ऐसे घट-घट राम है दुनियां जानत नांही।
तेरा सांई तुझमें है ज्यों पुष्पन में बास।
कस्तूरी का मृग ज्यो फिर फिर ढूंढे घास।
साहिब तेरी साहिबी हर घट रही समाय।
ज्यों मेंहदी के पात में लाली लखी न जाय।।

अतः इन सब संत महात्माओं की वाणियों से प्रमाणित है कि वह परमात्मा किसी लोक सतलोक में न होकर आत्मस्वरूप में ही है जिसे कोई भेदी गुरू ही लखा सकता है। जो घर में ही घर दिखला दे, चाम के महल में बोलते राम की पहचान करा दे। कबीर साहेब जी कहते हैं कि-

वस्तु कहां ढूंढे कहां किस विधि लागे हाथ।
कहे कबीर तब पाइये जब भेदी लीजै साथ।

तब दादू साहेब जी की बात सत्य हो जायेगी-

दादू देखा दीदा (आंखों से) हर कोई कहत सुनींदा।
यार अधर लख पाया तो हो गया दीदम दीदा (साक्षात्कार)।।

स्वामी रामानंदजी कबीर जी से कहते हैं कि-

बोलत रामानंदजी सुन कबीर करतार।

गरीबदास हर रूप में तू ही बोलनहार।।

तब साहेब जी उत्तर देते हैं कि-

ए स्वामी सृष्टा मैं सृष्टि हमरे तीर। दास गरीब अधर बसू मैं अविगत सत्य कबीर।।

अमर करूं सत्यलोक (आत्मस्वरूप) पठाऊ। ताते बंदी छोड़ कहाऊ।।

बंदी छोड़ हमारा नामम। अजर अमर स्थिर है ठामम।।

सोलह शंख पर हमरा तकिया गगन मंडल के जिन्दा।

हुक्म हिसाबी हम चल आये काटने यम का फंदा।।

सोहं ऊपर और है सत् सुकृत इक नाम।

सब हंसों का वंश है नहीं बस्ती नहीं ठांम।।

बन्दीछोड सदगुरू कबीर साहेब जी, नितिन साहेब जी की सदा ही जय हो, मेरे मालिक की। साहेब बंदगी सत्यनाम।

6. काल क्या है ? :

कबीर साहेब जी कहते हैं कि

काल काल सब कोई कहे काल न चीन्हा कोय।

जितनी मन की कल्पना काल कहलावे सोय।।

मन की अनन्त कल्पनाएं, इच्छाएं, तृष्णाएं ही काल का स्वरूप है। महात्मा गौतम बुद्ध जी ने कहा है कि दु:खों का कारण अनन्त तृष्णाएं है। सृष्टिरचना में मन-माया का योगदान है। नानक साहिब जी कहते हैं कि मन तू ज्योति स्वरूप है अपना मूल पिछान। काल पर्यायवाची शब्द है, जिसका अर्थ समय भी होता है। समयानुसार ही जन्म मृत्यु होते हैं। संसार के सारे कार्य समय के दायरे में ही आते हैं। गीता अध्याय 11 के 32 श्लोक में कालोअस्मि क्षयलोक प्रवृदान जो कहा है वह उसकी चार खानियो (अण्डज, जरायुज, स्वेदज, उद्भीज) की सृष्टि

का ही उल्लेख है जिसमें हजारों प्राणी समयानुसार जन्म-मृत्यु को पर्याप्त होते हैं। इन सबकी सृष्टिसंहार का मूल कारण काल है। सम्पूर्ण प्राणियों के सम्पूर्ण अंग-प्रत्यंग मिलकर हजारों आंख और भुजाएं हैं। दादूजी कहते हैं कि

दादू नाम कबीर का जै कोई लेवे ओट।
उनको कबहू न लागिए काल वज्र की चोट।
केहरि नाम कबीर का विषम काल गजराज।
दादू भजन प्रताप से भागे सुनत आवाज।
आदमी की आयु घटे तब यम घेरे आय।
सुमिरण किया कबीर का दादू लिया बचाय।।

7. मन की उत्पत्ति :

निःअक्षर से अक्षर भया, अक्षर किया प्रकाश।
अक्षर से मन ऊपज्या, सुनो संत धर्मदास।।
मन से माया ऊपजी, माया से त्रिगुण रूप।
पांच तत्व के महल में, बांधे सकल स्वरूप।।

कबीर साहेब जी धर्मदासजी सृष्टि रचना (मनमाया, त्रिदेव की उत्पत्ति) समझाते हुए कह रहे हैं कि उस निःअक्षर सारशब्द आत्मस्वरूप परमात्मा से अविनाशी जीव की उत्पत्ति हुई। फिर इस जीव सम्पूर्ण सृष्टि में उत्पत्ति का प्रकाश किया। इस जीव से मन की उत्पत्ति हुई। मन से माया उत्पन्न हुई और इस माया ने त्रिगुण रूप त्रिदेव- रजगुणब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शंकर जी की उत्पत्ति की अर्थात रजोगुण के वशीभूत होकर मनुष्य संतानोत्पत्ति, सतोगुण के वशीभूत होकर मोह ममता, लालन-पालन तथा तमोगुण के वशीभूत होकर लड़ाई-झगड़े, नाश (संहार) कर देता है। पांच तत्व के महल में अर्थात इस शरीर में पांच तत्व और पच्चीस प्रकृति का संयोग है। 1. पृथ्वी-हड्डी, मांस, त्वचा, रंध्र, नाखून। 2. जल-खून, लार, पसीना, मूत्र, वीर्य-रज। 3. अग्नि-भूख प्यास, आलस्य, निद्रा, जम्हाई। 4. वायु-बोलना, सुनना, सिकुड़ना, फैलाना, बल लगाना। 5. आकाश-शब्द, आविर्भाव, रस, गंध, स्पर्श। दस इन्द्रियां- 5

ज्ञानेन्द्रियां आंख, नाक, कान, त्वचा, जीभ तथा 5. कर्मेन्द्रियां-हाथ, पैर, वाणी, गुदा, लिंग। इन सबका सारथी गीतानुसार मन है।

कबीर बीजक में साहेब कहते हैं कि

आजा का घर अमर है पुत्र के सिर भार।

तीन लोक नाती ठगा पंडित करो विचार।।

यहां आजा नानाजी को कहा है, जो कबीर साहेब जी है, उनका घर अजर अमर अविनाशी बताया है। पुत्र के सिर भार का अर्थ काल को सृष्टि रचना का भार सौंपा गया जो साहेब जी का पुत्र है, तीन लोक नाती ठगा का अर्थ उनकी पुत्री माया (अष्टंगी) प्रकृति, दुर्गा (दुर्ग-शरीर रूपी किले में निवासी) आठो अंग मिली है माया-पांच तत्व+तीन गुण मिलकर जो आध्यमाया बनी है, इससे उत्पन्न तीन पुत्र-ब्रह्मा, विष्णु, शंकर (तीन गुण- रज, सत, तम) कबीर साहेब के नाती (दोहिते) हुए जिन्होंने मिलकर सारे जगत को ठग लिया है। अतः साहेब जी पंडितों से यह पहेली पूछ रहे हैं।

प्रथम गुरू मानिए जिन रचा जहान,

पानी से पिंड रच दिया सो अलख पुरूष निर्वाण।

अलख पुरूष निर्वाण है वाको लखे न कोय,

वाको तो वो ही लखे, जो वा निज घर को होय।

निज घर का हुआ तो क्या हुआ, तत्व लखे जो होय।

तत्व लखे सो सूरमा, सिर माथे का मोर।

सब सन्तन को बन्दगी अपनी-अपनी ठोर ।।

हरि दर्जी का मर्म न पाया, जिन यह चोला अजब बनाया।

पानी की सुई पवन का धागा, नौ दस मास सींवने लागा।

पांच तत्व की गुदरी बनाई, चन्द सूरज दो थिगरी लगाई।

कोटि जतन कर मुकुट बनाया, बिच-बिच हीरा लाल लगाया।

आपै सीवै आप बनावै प्राण पुरूष को ले पहरावे।

कहे कबीर सोई जन मेरा, नीर-क्षीर का करें निबेरा।

नीर-क्षीर विवेकी ही परमात्मा के मूल ज्ञान को समझकर हंस की तरह दूध का दूध और पानी का पानी कर लेगा। इस मूल ज्ञान को समझने के लिए देही गुरू की बहुत ही आवश्यकता है, उसके बिना मूल ज्ञान को जानना कदापि संभव नहीं है। नित्यानंद जी कहते हैं कि-

शब्द सैन सतगुरू की पिछानी पाया अटल सुहाग रे।

नित्यानंद महबूब गुमानी प्रगट पूर्ण भाग रे।।

करता करे ना कर सके गुरू करें सो होय।

तीन लोक नौ खंड में गुरू से बड़ा न कोय।।

द्राविड़ भगति ऊपजी लाए रामानंद।

परगट कीन्ही कबीर ने सात द्वीप नौ खंड।।

तीन लोक है देही में रोम-रोम में राम।

बिन सतगुरू पावैं नहीं सार शब्द प्रमाण।।

यहां पर तीन लोक स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक, पाताल लोक है नौ खंडों में सबसे ऊपर सूर्य, चन्द्र, तारे। मध्य में आकाश, हवा, जीव तथा सबसे नीचे पृथ्वी, जल, अग्नि है। सात द्वीप (महाद्वीप) एशिया, आस्ट्रेलिया, यूरोप, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, अंटार्कटिका है। इन सबमें कबीर साहेब जी का ज्ञान प्रचारित-प्रसारित है।

और ज्ञान सब ज्ञानडी कबीर ज्ञान सो ज्ञान।

जैसे गोला तोप का करता चले मैदान।।

प्राचीन काल में भारत को जम्बूद्वीप नाम से भी जानते थे। इसलिए कबीर सागर में आया जम्बूद्वीप जम्मू-कश्मीर के लिए नहीं आया है। आर्यव्रत भी भारत का ही नाम था।

साहेब बंदगी। सत्यनाम। परमपिता परमात्मा की असीम रजा से

आत्मकल्याण का सूर्योदय सद्गुरू नितिन साहेब जी द्वारा हो चुका है, अतः ऐसे अनमोल अवसर का लाभ जगत के प्रत्येक प्राणी को प्राप्त करना चाहिए जो जीव वंचित रह जायेंगे उनके लिए कबीर साहेब कहते हैं कि-

आछे दिन पाछे गये हरि से किया ना हेत।

अब पछताएं होत क्या जब चिड़िया चुग गयी खेत।।

राम नाम कड़वा लागे मीठे लागे दाम।

दुविधा में दोनो गये माया मिली न राम।।

गरीबदास जी भी कहते हैं कि-

यह संसार समझता नाही कहता शाम दुपहरे नूं।

गरीबदास यह वक्त जात है रोवेगा इस पहरेनूं।।

दादू है को भय घणा, नांही को कछु नांही।

दादू नांही होई रहो, अपने साहिब मांहीं।।

-स्वामी दादू दयाल जी महाराज

जब तक वासना और अहंकार अभीमान बड़प्पन और घमण्ड है तब तक भय, दुःख संकटों का बखेड़ा ही रहता है। जिज्ञासु साधकों को चाहिए कि वह अपना आपा मेट कर अर्थात बिल कुल खाली होकर रहें। ऐसा होकर रहें कि "दादू" है ही नहीं, मरजीवा होकर में ही समाहित रहे। वाणी कहती है कि "आपा में आप समावे" तो आपा में आप समाहित हो जाओ। सब भ्रम और भय खत्म। हमेशा के लिए भय और भ्रम खत्म।। सतनाम।।

दादू दयाल जी महाराज की अमृतवाणी कहती है कि :-

जहां राम तहां मैं नहीं, मैं तहां नांहीं राम।

दादू महल बारीक है, द्वे को नांही काम

यह मैं क्या है? मलिन वासना, अहंकार, और अभीमान तथा पूज्य भाव वहां ही "मैं" है।

"मैं" तहां नहीं राम का मतलब ? जहां पर मलिन वासना और अहंकार

बड़प्पन और पूज्य भाव, अभीमान है, वहां राम अर्थात साहिब परमात्मा नहीं है।

दादू महल बारीक है, द्वै को नांहीं काम का मतलब ? स्वरूप अर्थात अपना आत्मस्वरूप सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है, वहां द्वैतभाव बिल्कुल नहीं है, वहाँ तो अद्वैत भाव ही है। इसे ही दादू दयाल जी महाराज ने बारीक महल बताया है। हमें अर्थात जिज्ञासु साधकों को भी सूक्ष्म से सूक्ष्म होकर रहना है। मलिन वासना अहंकार अभीमान बड़प्पन और पूज्यका परित्याग करना चाहिए। सतनाम।।

दादू दयाल जी महाराज कहते हैं कि :-

मैं नहीं तहां मैं गया, एकै दूसरा नांही।

नांही को ठाहर घणी,दादू निज घर माहीं।।

दादू दयाल जी महाराज के कहने का भाव है कि अहंकार अभीमान बड़प्पनी और पूज्य भाव और मलिन वासना से निवृत्त अर्थात रहित होना ही भेद, द्वैत भाव खत्म हो जाता है और वह जिज्ञासु साधक को अपने आत्म स्वरूप में समाहित होने के लिए घणी अर्थात बहुत-बहुत जगह सहजता से मिल जाती है। साधक आपा में आप समाहित हो जाता है।। सतनाम।।

दादू आपा जब लग, तब लग दूजा होई।

जब यह आपा मिट गया, तब दूजा नांही कोई।

दादू दयाल जी महाराज समझा रहे हैं कि आपा अर्थात "मैं" का खात्मा ही आपा को खत्म करना है, यह "मैं" खत्म होते ही केवल आत्म स्वरूप ही है। दूसरा है ही नहीं। जिज्ञासु साधकों को चाहिए कि आपा को मेट कर आपा में समाहित हो जाओ अर्थात "मैं" को खत्म कर दो और आत्म स्वरूप प्राप्त कर लो, यही आपा में आप समाना है। सतनाम।।

दादू मैं नहीं तब एक है, मैं आई तब दोई।

मैं से पड़दा मिट गया, तब दूजा नांही कोई।।

आपने आत्म स्वरूप प्राप्त करने के संदर्भ में.....

कबीर साहेब जी कहते हैं कि :-

रूप स्वरूप हद बेहद नांही।

चारों बानी खानी तांही।।

व्रण अव्रण काया नहीं माया।

युग वेदन की तहां न छाया।।

षट दर्शन पाखंड ना तहां।

बावन अक्षर अकार न जहां।।

नो पट चार अष्ट दर्श नांही।

पांचों तत्व धाम नहीं तांही।।

मन बुद्धि चित्त अहंकार ना वासा।

काल कर्म को नहीं प्रकाशा।।

तहां ध्यान धर तारी लावै।

सोई मूल परम पद पावै।।

हम कबीर पंथी हैं ?.....

पंथ का मतलब मार्ग। हम मार्ग पर चलने वाले मार्गी हैं। कबीर पंथी हैं, तो कबीर साहेब जो हमें समझा रहे हैं, हमें समझना चाहिए। समझेंगे तो अपने सर्वोच्च उत्तम और मूल लक्ष्य आत्म परमात्म स्वरूप को प्राप्त करने के अधिकारी जीते जी प्राप्त कर सकते हैं।। सतनाम।।

सुझाव : अपने सतगुरू दाता की असीम अपरम्पार और अटूट दया मैहर के सतपात्र बनें और यथार्थ मूल ज्ञान का अध्ययन अनुसरण कर अपने आप और हम पर कृपा करें जी।

धरो निरंतर ध्यान सार शब्द प्रकाश का।

जिससे मुक्ति होय, लखो नाम प्रताप यह।।

-कबीर साहेब जी

बोलो सतगुरू देव की जय हो, जय हो।।

जय-जय बन्दी छोड़ सत्य कबीर साहेब जी की जय हो, जय हो।।

साहिब बन्दगी सतनाम।।

साहेब बंदगी। सत्यनाम। कबीर सागर में धर्मदास जी को कबीर साहेब जी समझा रहे हैं- जो मम संत सत् शब्द द्रडावे। वाके संग सब राड बढ़ावे।। अर्थात मेरे असली संत के सानिध्य उनके अपने ही विरोधी हो जायेंगे क्योंकि वह उस सत् शब्द को विशेषज्ञ रूप से भगतों को दृढ़तापूर्वक समझायेगा जिससे यह काल दुःखी होकर कालप्रेरित लोगों द्वारा उस संत के साथ लड़ाई झगड़ा करायेगा। इसलिए सकल हंस आत्माओं से दास का करबद्ध निवेदन है कि नितिन साहिब जी के इस मूल ज्ञान और मुक्ति ज्ञान में द्रढ़ होकर भगति करते रहे मन में कालप्रेरणावश किसी भी प्रकार का दोष लाकर भक्ति मर्यादा से विमुख नहीं होवे। कबीर साहेब जी कहते हैं कि-

संशा शूल बबूल है, संशय सर्प शरीर।

राग द्वेष बड़े रोग हैं, यम के पड़े जंजीर।।

अतः पुण्यात्माओं इसे वहीं छह सौ वर्ष पूर्व वाले साहेब जी की लीला समझकर अपनी भगति में द्रढ़ता से लग जाये, नहीं तो यह मौका चूकने पर और अवसर मुक्ति का नहीं आने वाला है। गरीबदास जी कहते हैं कि

यह संसार समझता नांही कहता शाम दुपहरे नूं।

गरीबदास यह वक्त जात है, रोवेगा इस पहरेनूं।।

8. अथ सारशब्द-प्रथम भेद

चौपाई

प्रथम भेद जो पौ का कहिया। तीन लोक जाके वश रहिया ।।1।।

प्रथम भये वश तीनो देवा। मूल जानि पौ कीन्हों सेवा ।।2।।

लखि नहीं परी मूल की बानी। छाया मूल मूल पहिचानी ।।3।।

जोगी, जति, तपी, सन्यासी। पौ के फनदे फिरैं उदासी ।।4।।

सुर, नर, मुनि गण गंधर्व, देवा। लखा न काहू पौ का भेवा ।।5।।

पीर, औलिया, नवी, रसूला। पौ की कर्क मिटा नहि शूला।।6।।

पौ के फंदे सब पचि मुये। गुरू बिना मुक्ता कोई न हुए।।7।।

टीका : सद्गुरू मदन साहेब कहते हैं कि सर्वप्रथम में पौ अर्थात माया (बावन अक्षरों) के रहस्य का उद्घाटन करता हूँ। जिन बावन वर्णों के वश में तीनों लोक समाहित है अर्थात समस्त प्राणी (बावन अक्षरों से उत्पन्न) संकल्प विकल्प रूपी बन्धन से बंधे हुए हैं। जब जैसा संकल्प प्राणियों के मन में उठता है वे तब वैसा अच्छा व बुरा कर्म करने लगते हैं। बावन अक्षरों द्वारा संचालित कर्मचक्र ही प्राणियों के बन्धन का मुख्य कारण है। सर्वप्रथम सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्मा, विष्णु, महेश बावन अक्षरों के संकल्प विकल्प में बंध गये। यही नहीं, उन्होंने इन बावन अक्षरों को ही अपना कर्ता-धर्ता ठहरा कर सेवा वन्दना करना प्रारम्भ कर दिया। इन सबों को आदि परमात्मा के स्वरूप का कुछ भी ज्ञान नहीं रहा, अपितु स्वयं से उत्पन्न बावन अक्षरों के मायाजाल को ही मूल समझ बैठे। परिणामतः वह परमात्मा के साथ-साथ स्वयं के आत्म स्वरूप को भी भुला बैठे। इतना ही नहीं, इस सृष्टि के बड़े-बड़े तपस्वी, ज्ञानी, सुर, नर, मुनि, गन्धर्व, पीर, औलिया, परमहंस आदि बावन अक्षरों द्वारा उत्पन्न संकल्प विकल्प से सुखी दुःखी होने लगे। वे ज्ञान ध्यान की बड़ी-बड़ी बातें करने लगे। किन्तु यह न समझ सके कि मेरे सुख-दुःख का मूल कारण मुझसे उत्पन्न यह बावन अक्षर ही है। उन्होंने ज्ञान तो प्राप्त किया, किन्तु माया की ऐसी दशा में सद्गु— की प्राप्ति बिना इस संसार में कोई भी व्यक्ति मुक्ति को प्राप्त नहीं हुआ।

साखी

अद्भुत कथा जो पौ की, कहाँ कहा नहि जाए।

ज्यों प्रतिमा लखि शीश में, स्वान भूखि मर जाये।।1।।

टीका : बावन अक्षरों से उत्पन्न माया की कथा अति विचित्र है। मैं इसके रहस्य का उदघाटन तो करना चाहता हूँ, किन्तु कह नहीं पा रहा हूँ। यह बावन अक्षरों की माया जीव को ठीक उसी तरह अज्ञान से बाँधे हुए है जिस तरह काँच के मन्दिर में स्वान स्वयं के स्वरूप को देख दूसरा स्थान होने के भय से भोंक-भोंक कर स्वयम के अज्ञान के कारण दुःखी हो जाता है।

चौपाई

जीव निरोगित कतहुं न देखा, पौ का रोग सबहि घट पेरवा ।।1।।

गुरू रोगी-रोगी भये चेला, पौ का रोग दोऊ घट मेला ।।2।।

अन्ध-अन्ध को राह बतावे, कहु केहि भांति मंजिल पहुंचावे ।।3।।

पौ का फन्द कहा नहि जाई, मुसरी पकड़ि विलारहि खाई ।।4।।

गज चिऊँटी के मुख में जाई, सिन्धु बूँद में उलटि समाई।।5।।

स्यार सिंह से सरवरि करै, श्वान चीता से सन्मुख लरै ।।6।।

कहँ साँच झूठ जो मानो, तो मैं गुरू की साखि बखानौ ।।7।।

टीका : इस संसार में कोई भी जीव सुखी दिखाई नहीं देता। समस्त जीव बावन अक्षरों के संकल्प विकल्प द्वारा अपने आप में दुःखी दिखाई दे रहे हैं। संसार के गुरूआ लोग भी बावन अक्षरों के माया जाल में बंधे हुए हैं। ऐसी दशा में उनसे उपदेश लेने वाले शिष्य इस माया से अछूते नहीं रह पाये, जो स्वयं से अज्ञान दशा को प्राप्त है। ऐसा अन्धा गुरू दूसरे को क्या मार्ग दर्शन करेगा।

परिणाम से : गुरू शिष्य दोनो अपने लक्ष्य से भटक गये। इस बावन अक्षर रूपी माया के जाल को किसी भी तरह कहा नहीं जा सकता। बड़ा आश्चर्य तो यह है कि बावन अक्षर रूपी चुहिया आत्मा रूपी बिल्ली को निगल रही है। यही नहीं विशाल हाथी रूपी आत्मा बावन अक्षर रूपी चींटी के मुख में जा रही है। कितना आश्चर्य है कि सिन्धु के समान अनन्त शक्ति वाली आत्मा बावन अक्षर रूपी बूँद में उलट करके समाहित हो रही है, कितने आश्चर्य की बात है कि बावन अक्षर रूपी सियार आत्मा रूपी सिंह की बराबरी कर रहा है। कुत्ता रूपी बावन अक्षर चीता रूपी आत्मा के सामने युद्ध कर रहा है। सद्‌गुरू मदन साहेब कहते हैं कि उपरोक्त जितनी भी बातें मैं कह रहा हूँ वे सब की सब सत्य हैं। यदि तुम्हे विश्वास नहीं हो तो गुरू की साखी तुम्हारे सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ।

साखी

साखी गुरू कबीर हैं, मान लेहू परतीत।

मदन समुझ यह गहि मत, चले सो भवजल जीत।।1।।

टीका : सद्गुरू मदन साहेब कहते हैं कि मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ उसकी गवाही सद्गुरू कबीर साहेब स्वयं हैं। इस माया रूपी के गंभीर रहस्य को भली प्रकार समझ कर संसार रूपी समुद्र से पार उतर जाओ, मेरी कही बात पर दृढ़ विश्वास करो।

शब्द

झगड़ा एक बड़ो राजाराम। जो निखारे सो निरवान।।11।।

ब्रह्म बड़ा कि जहाँ से आया। वेद बड़ा कि जिन निरमाया।।12।।

ई मन बड़ा कि जेहि मन माना। राम बड़ा कि जिन रामहि जाना।।3।।

भ्रमि-भ्रमि कबिरा फिरै उदास। तीर्थ बड़ा कि तीर्थ का दास।।4।।

टीका : सद्गुरू मदन साहब बावन अक्षरों के प्रति व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि ऐ बावन अक्षरों तुम्हारे द्वारा निर्मित राम का नाम बड़ा है। या जिसके द्वारा तुम निर्मित हुए हो, वह बड़ा है जो इस झगड़े का निवारण कर दे वही मुक्ति का दाता या अधिकारी है। मैं प्रश्न करता हूँ कि शब्दों के द्वारा व्यक्त ब्रह्म शब्द बड़ा है या कि जहाँ से ब्रह्म शब्द पृथक हुआ है, वह शब्दों के द्वारा निर्मित वेद बड़ा है या कि वेद को बनाने वाला चेतन आत्मा यह मन जो कि बावन अक्षरों का जन्मदाता है या कि जो मन बावन अक्षरों की पूजा करता है। वह पुनः पूँछते हैं कि शब्द राम बड़ा है। या कि शब्द राम का जानकार चेतन आत्मा इस संसार के अज्ञानी जीव साधु अपने-अपने भ्रम के वशीभूत होकर दुःखी घूम रहे हैं, उन्हें यह ज्ञान नहीं कि तीर्थों का बड़प्पन स्वयं से है कि वहाँ निवास करने वाले साधु सेवकों से अर्थात बिना साधु सेवकों के तीर्थों का कोई महत्व नहीं है। अतः साधु सेवक ही बड़े है तीर्थ नहीं।

विशेष : बावन अक्षरों का निर्माता चेतन आत्मा पूज्य है। उससे उत्पन्न (शब्द रूप) राम नाम नहीं, अर्थात बावन अक्षरों में चेतन आत्मा नहीं, अपितु इसकी छाया है।

बीजक शब्द

आपन पौ आपहि से विसरौ।

जैसे स्वान काँच मन्दिर में, भ्रम से भूँकि मरो।।1।।

ज्यों केहरि वपु निरखि कूप जल, प्रतिमा देख गिरो ।

वैसे ही गज फटिक शिला में दर्शन आनि अड़ो ।।2।।

मर्कट मूँठि स्वाद नहिं बिहुरै, घर-घर रटत फिरो।

कहै कबीर ललनी के सुगना, तोहि कवन पकरो।।3।।

टीका : सद्गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि इस आत्मा को अपने से उत्पन्न बावन अक्षरों का ख्याल ठीक उसी तरह नहीं रहा, जिस तरह काँच मन्दिर में कुत्ता अपनी प्रतिमा देखकर स्व अज्ञान के कारण भूँक-भूँक मर जाता है। जिस प्रकार सिंह कुएँ के जल में स्वयं का प्रतिबिम्ब देखकर उसे दूसरा समझ कुएँ में कूदकर प्राण गवाँ देता है। जैसे उन्मत्त हाथी स्फटिक शिला (पत्थर) में स्वयं की प्रतिमा देखकर उसमें भिड़ जाता है, जिस तरह बन्दर सुराही में पड़े चनों को देखकर लालच में हाथ डाल मुट्ठी बाँध लेता है, उसे छोड़ता नहीं, परिणाम यह होता है कि वह बाजीगर द्वारा पकड़ा जाता है तथा घर-घर नाच नचाकर भीख मांगने का साधन बन जाता है। नलिका के ऊपर बैठा हुआ सूआ यद्यपि स्वयं अज्ञाने के कारण नलिका को नहीं छोड़ता है। वह अज्ञान से समझ बैठता है कि मैं नलिका द्वारा पकड़ा गया हूँ और इसको छोड़ने में गिर कर डूब जाऊँगा, यह सब अज्ञान का सूआ ही है। यदि वह नलिका छोड़कर उड़ जाये तो उसे प्राण चले जाने का भय बना रहता है।

इस प्रकार कहने का आशय यह है कि यदि जीव बावन अक्षरों के संकल्प विकल्प को त्याग स्व आत्मस्वरूप में समाहित हो जाये, तो यह संसार के दुःखों से सब तरह छुटकारा पा जाये। सृष्टि के समस्त जीव बावन अक्षरों के संकल्प विकल्प में उलझे हुए हैं, जिसके अन्तस में जब जैसा संकल्प उठता है, वह उसी तरह का कर्म करने लगता है, संकल्प ही कर्म का मुख्य आधार है।

साखी

जहां गाहक तह हौं नहीं, हों तहाँ गाहक नाहि।

बिन विवेक भटकत फिरै, पकड़ी शब्द की छांहि।।1।।

टीका : जिस स्थान पर आत्म परमात्म सत्ता को खोजने वाले हैं, वहाँ चेतन आत्मा या परमात्मा का असली स्वरूप है ही नहीं अर्थात जिस शब्द या अर्थ में विश्वास करके मनुष्य स्व आत्मस्वरूप का परमात्म स्वरूप की अनुभूति करना चाहता है, वहाँ आत्मा-परमात्मा है ही नहीं, जिस स्थान पर आत्म परमात्म सत्ता है, वहाँ उसके खोजी नहीं है। अज्ञानी मनुष्य स्व आत्म स्वरूप से निर्मित आत्मा की छाया बावन वर्णों में अपने स्वरूप को खोज रहा है। ये उसकी विवेक हीनता नहीं तो और क्या है? वहाँ मनुष्य को विचार करना चाहिए कि बावन अक्षरों से निर्मित मत्रांदि आत्म सत्ता का बिम्ब नहीं अपितु प्रतिबिम्ब है।

अमर मूल ग्रन्थ

साखी

जहां बोल तहं अक्षर आया। जहाँ अक्षर तहाँ मनहि दृढ़ाया ।।1।।

बोल अबोल एक है सोई। जिन यह लखा सो बिरला होई ।।2।।

टीका : जहाँ वाणी वचन मन्त्र आदि का उच्चारण होता है। वहां चेतन आत्मा से उत्पन्न प्रथम ध्वनि 'अ' से उत्पन्न बावन अक्षरही प्रतिबिम्ब होंगे और जहाँ बावन अक्षर ही प्रतिध्वनित होंगे और बावन अक्षर की ध्वनि है, वहां सबकी सब मन कल्पना है, जो आत्मा का वास्तविक स्वरूप नहीं है। आत्म सत्ता से उत्पन्न प्रथम ध्वनि 'अ' तथा अबोल "आत्मा" के इस रहस्य को भली प्रकार समझता है, ऐसा इस संसार में कोई विरला ही है।

साखी

तन, मन बारै संत पर, आपन पौ लखै बनाय।

सो जिव जहंड़े नहीं पड़ै, मोही मांह समाय।।1।।

लख चौरासी भरमि के, पौ पर अटके आय।

जो अबकी पौ न लखै, फिर चौरासी जाय।।2।।

नौं नाथ चौरासी सिद्ध, कोटि अनन्तोदास।

काहु न लखा आपन पौ, भ्रमि-भ्रमि फिरै उदास।।3।।

आधी साखी सिर खड़ी, जो निरवारी जाय।

क्या पंडित की पोथियां, रात दिवस मिल गाय।।4।।

लोभे जन्म गवाँइया, पापै खाया पुण्य।

आधी से आधी कहै, तापर मेरो खुन्य ।।5।।

टीका : जो जिज्ञासु खोजी स्व स्वरूप अनुसंधान के लिए संत सद्गुरू पर अपने तन, मन को समर्पित बावन अक्षरों के भेद को समझ कर अपनी आत्मा को जानने का प्रयास करगा, ऐसा खोजी साधक हीं संसार के जन्म मरण-रूपी कुचक्र से बचकर प्रभु परमात्मा को प्राप्त करने में सफल होगा।

युग-युगान से वह जीव नाना योनियों में भटक रहा है। भटकते-भटकते सौभाग्य वश इसे यह मनुष्य शरीर प्राप्त हुआ है। यदि यह शरीर को पाकर अपने स्वरूप रूप को जानने में असफल हो गया, तो फिर इसे नाना योनियों में भटकना पड़ेगा। ऐसी दशा में मनुष्य का धर्म है। कि वह नश्वर शरीर तथा बावन अक्षरों के रहस्य को समझे, तभी उसे सुख शान्ति मिलेगी।

इस संसार में गोरखनाथ जैसे नवनाथ तथा चौरासी सिद्ध साधु एवं परमात्मा के खोजी अनन्त दास भी अपने स्वरूप (आत्म सत्ता) तथा उससे उत्पन्न बावन वर्णो के रहस्य को जानने में असफल रहे, जिसके कारण उन्हें संसार में दुःखी होकर भटकना पड़ा, मुक्ति का रास्ता नहीं मिला।

यदि सद्गुरू कबीर साहेब की आधी साखी का विवेकपूर्ण निराकरण किया जाये तो आत्मा-परमात्मा के स्वरूप का ठीक-ठीक ज्ञान हो जाये। इसके विपरीत जीवन पर्यन्त वेद शास्त्र जैसे नाना ग्रन्थों का पठन-पाठन स्वध्याय क्यों न किया जाये, आत्म-परमात्म स्वरूप का भेद मिलना असम्भव है क्योंकि उसमें उस सत्ता के असली स्वरूप का कहीं भी वर्णन नहीं है।

संसारी मनुष्य आत्म-परमात्म सत्ता की जानकारी प्राप्त करने के लिए जप,

तप योग का ज्ञान ही आत्मा रूपी पुण्य को नष्ट कर देता है, स्वर्ग बैकुण्ठ आदि के लोभ में अपने जन्म को गवां दिया, तुम्हारा अज्ञान रूपी पाप ज्ञान रूपी पुण्य को खा लिया है। वह ऐसा प्राणी आधी (आत्म, ज्ञान, आधी परमात्म ज्ञान का) कथन करता है, जिस पर मेरा रन्ज है।

बीजक शब्द

हरि ठग-ठगत ठगौरी लाई,

हरि के वियोग कैसे जियहु रे भाई।।

को काको पुरूष कौन काकी नारी,

अकथ कथा यम दृष्टि पसारी।।

को काको पुत्र कौन काको बाप,

को रे मरै को सहे संताप।।

ठगि-ठगि मूल सबन का लीन्हा,

राम ठगौरी काहू न चीन्हा ।।

कहहिं कबीर ठग सो मन माना,

गई ठगौरी का जब ठग पहिचाना।।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहेब ने इस शब्द में ज्ञान को हरने वाले हरि शब्द के बावन अक्षर पौ माया तथा शब्द मन्त्रों का उपदेश करने वाले गुरू लोगों के प्रति संकेत किया है।

इस संसार में परमात्मा के वियोगी जिज्ञासु साधकों को अज्ञानी गुरूवों लोगों ने बावन अक्षरों के अज्ञान द्वारा उनके आत्म ज्ञान को ठग लिया है। अतः ऐसे परमात्मा के प्रेमी वियोगी साधक किस तरह सुख शान्ति पा सकते हैं। इस संसार में न तो कोई किसी का पति है और न कोई किसी की स्त्री, स्वस्वरूप में चाहे वह पुरूष हो या स्त्री एक चेतन आत्मा ही है। अज्ञानी गुरूवा लोगों ने स्त्री पुरूष जैसे द्वन्दों का झगड़ा फैला दिये हैं। इसी तरह यहाँ न तो कोई किसी का पिता है न किसी का पुत्र माता, पिता, पुत्र का झूठा नाता दिखावटी है। अज्ञान वश पुत्र को मृत्यु पर पिता दुःखी होता है तथा पिता की मृत्यु पर पुत्र गुरूआ

लोगों को अज्ञानता रूपी गुरूवाई ने सभी साधकों के आत्मा रूपी स्व. स्वरूप ज्ञान को ठग लिया है। बावन अक्षरों द्वारा निर्मित राम शब्द ने सबको मुक्ति का प्रलोभन देकर ठग लिया है। बावन अक्षरों द्वारा उत्पन्न विभिन्न मन्त्र, वेद आदि ज्ञान की इस ठगौरी को आज तक किसी ने समझ ही नहीं पाया है। सद्‌गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि संसारी मनुष्य इसी बावन अक्षर रूपी ठग पर विश्वास करते हैं। इसी के द्वारा अपनी मुक्ति चाहते हैं, जो सर्वथा असम्भव है। मनुष्य इस अज्ञानता जन्य महाठगौरी से तभी बच पायेगा। जब वह अज्ञानी गुरूवां लोगों द्वारा सुझाये गये बावन अक्षर रूपी अज्ञान को समझने का प्रयास करेगा।

कहने का आशय यह है कि मनुष्य ज्ञान की कसौटी पर विवेक द्वारा राम, आत्म-परमात्मा, खुदा, गौड़ के चैतन्य स्वरूप का ठीक-ठीक चिन्तन नहीं करेगा। तब तक वह आत्मा से उत्पन्न बावन अक्षरों के द्वारा निर्मित मन्त्र, कल मा आदि के जाप, पठन-पाठन में विश्वास करके स्वयं के स्वरूप ज्ञान से सर्वथा वंचित रहेगा, तथा मंत्र, जाप, तप, योग के द्वारा ही आत्म कल्याण की बात सोचता रहेगा, जो सर्वदा असम्भव है।

साखी

आजा का घर अजर है, बेटा के सिर भार।

तीन लोग नाती ठगे, पंडित करो विचार।।1।।

टीका : उपरोक्त आत्म परमात्म चैतन्य सत्ता को निम्न साखी के माध्यम से जानने का प्रयास कीजिए। अक्षर (परमात्मा) या सारशब्द इस पञ्चभौतिक शरीर से सर्वथा अलग सत्ता है। इसका इस शरीर से किंचित संबंध नहीं। आत्म चैतन्य सत्ता के द्वारा ये पञ्चभौतिक शरीर संचालित आत्म सत्ता द्वारा निर्मित बावन अक्षरों के संकल्प विकल्प से संसार के अनेकानेक कर्म कर रहा है। यदि वह बावन अक्षर न हो तो शरीर कुछ भी करने में सक्षम नहीं, नहीं बावन अक्षरों के द्वारा नाना ग्रन्थ स्वर, मन्त्रादि बनाये गये हैं। इसी बावन अक्षरों के द्वारा नाना ग्रन्थ, स्वर मन्त्रादि आदि बनाये गये हैं। जिसमें फंसकर मनुष्य स्वयं के असली स्वरूप को भूल गया, इन्हीं बावन अक्षर रूपी परमात्मा के नाती ने तीनों लोकों को ठग कर अपने वश में कर लिया है।

बीजक

को असनगर करै कोतवलिया, मांस फैलाय गिद्ध रखवलिया।।1।।

मूस भये नाव मंजारि खेवन हरिया, सोवत दादुर सर्प पहरिया।। 2 ।।

बैल बियाय गाय भई बंझा, बले वहि तीन जुन संझा।।3।।

नित उठि सिंह स्यार संग जुझे, पद कबीर जन विरला बूझै।।4।।

तर भई गगरी ऊपर पनिहारी, लड़का के गोद खेलै महतारी।।5।।

कहै कबीर यह अकथ कहानी, भेड़हा के घर छेगड़ी रानी।।6।।

टीका : इस शरीर रूपी नगरी का झगड़ा निपटाना बहुतकठिन है क्योंकि इसमें आत्मा रूपी मांस फैला हुआ है, जिसकी रक्षा हेतु बावन रूपी गिद्ध बैठाया गया है अर्थात बावन अक्षरों के जप आदि द्वारा आत्म कल्याण की इच्छा करना बहुत ही बड़ी भूल है। जिस तरह गिद्ध कभी भी मांस की रखवाली न करके उसे स्वभाव वश खा जायेगा। ठीक उसी तरह आत्म चेतना बावन अक्षरों के द्वारा निर्मित मंत्रादि के जप से अपनी रक्षा नहीं कर सकती। उसी सत्य को अन्य प्राणियों द्वारा व्यक्त किया गया है।

आत्मा रूपी चूहे की नाव को चलाने के लिए बावन वर्ण रूपी बिल्ली को नाविक बनाया गया है। आत्मा रूपी मेढ़क की रक्षा के लिए बावन वर्ण रूपी सर्प को पहरेदार नियुक्त किया गया है। यहां 'अ' आकार रूपी बैल से स्वर व्यंजनादि पैदा हो रहे हैं तथा आत्मा रूपी गाय बांझ हो गई है। बावन वर्णों रूपी बछवा को तीन पहर दुहते हैं अर्थात बावन वर्णों के द्वारा निर्मित मन्त्रादि के माध्यम से (सुबह, दोपहर, शाम) अर्चना, वन्दना, आरती पूजा नमाज आदि के रूप में पढ़ते हैं। आत्मा रूपी सिंह नित्य प्रति बावन वर्ण रूपी सियार से लड़ता है अर्थात आत्मा बलिष्ठ होकर निर्बल 'सियार' रूप बावन अक्षरों के माध्यम से आत्म कल्याण की भिक्षा मांगती है।

सद्गुरू साहब के इस पद का यथार्थ ज्ञान कोई विरला ही पूछता है। सद्गुरू कबीर साहब कहते हैं। कि यह कहानी अकथनीय है। आत्मा रूपी भेड़िये के घर में बावन वर्ण रूपी छेकड़ी रानी बनी बैठी है अर्थात आत्मा बावन अक्षरों को अपना मालिक समझ कर उसे ही सर्वस्व सौंपे हुए है।

साखी

बून्द समानी समुद्र में, यह जाने सब कोय।

समुद्र समाना बून्द में, बूझे बिरला कोय।।1।।

टीका : आत्मा रूपी समुद्र से बावन अक्षर रूपी बूंद की उत्पत्ति है अर्थात आत्मा के द्वारा जंत्र, मन्त्र, वेद आदि बनाये गये हैं। यह सभी जानते समझते हैं। इतना होते हुए भी आत्मा ने मंत्रादि को अपना गुरू समझ रखा है। जो सब तरह उल्टा अनर्थकारी है। यही नहीं समुद्र रूप आमा जंत्र-मंत्र रूपी बूँद में अपने अस्तित्व को समाप्त कर उसी में समाहित हो गई है। यह रहस्य कोई विरला ही पूछता है।

शब्द

शब्द तेरी पारख कोई न करी।

दुल्हन के सिर मौर विराजै, दूल्हा के सिर चुनरी।

आय बरात दुवारे लागी, दूल्हा के बिग पकरी ।।1।।

बासी भात बरातिन खायो, मड़ये में कहर परी।

कहँ कबीर सुनौ भई साधो, विरलन समुझि परी ।।2।।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि स्वर व्यंजनादि से निर्मित ऐ शब्द तेरी असलियत को जानने की कोशिश किसी ने नहीं की अर्थात तू कैसे किसके द्वारा जन्मा पैदा हुआ। कैसे अजब अंधेर आत्मा रूपी स्वामी को दासता (अधीन) की चुनर ओढ़ाकर दुल्हन बना दिया गया और दासी रूप बावन अक्षरों से निर्मित शब्द मंत्रादि ने पकड़ कर अपने अधीन कर लिया। यही नहीं चेतन आत्मा रूपी बासी भात को बावन अक्षर रूप मन्त्र आदि बाराती मिलकर खा गये परिणाम स्वरूप शरीर रूपी मंडप के नीचे दुःख का वातावरण बन गया अर्थात इस क्रिया कलाप से आत्म शान्ति की जगह असन्तोष या दुःख प्राप्त होने लगा। यह बात कोई विरला आत्मा-परमात्मा का खोजी ही समझने में सफल हुआ है। अन्यथा सभी इसी बहाव में बह रहे हैं तथा आत्म कल्याणा की आशा किये हैं, जो सर्वथा असम्भव है।

साखी

साखी शब्द कबीर की, सत्य मान जो कोय ।

मदन समुझि गुरू पद मिलै, जीवन मूक्ता होय।।1।।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहेब द्वारा कथित साखी शब्दों को सत्य मानकर जो खोजी जिज्ञासु विश्वास करेंगे, वे आत्मस्वरूप को जानकर अपने जीवन काल में ही मुक्त हो जायेंगे, ऐसा सद्‌गुरू मदन साहेब का कहना है।

प्रथम भेद समाप्त

9. अथ सारशब्द–दूजा भेद

चौपाई

दूजा भेद त्रिगुण जो भाना। ताकि गति कोई विरलै जाना।।1।।

उत्पत्ति पालन परलय करना चार खानि पर तीनो रचना।।12।।

जाहि त्रिगुण से तीनो होई ताहि त्रिगुण को लखे न कोई।।3।।

देखत है मैं जानत नाहीं। एक रूप पर तीनों आहीं।।4।।

बिन गुरू ज्ञान नजर नहिं आवै। काल रूप नित शिर पर धावै।।5।।

टीका : नाम प्रकाश का दूसरा भेद काल का भेद है काल का कार्य किसी वस्तु परिस्थिति आदि का प्रतिक्षण रूप परिवर्तन करना है अर्थात कोई भी वस्तु विशेष निरन्तर बदलती रहे। अपने पूर्व रूप में एक पल भी स्थिर न रह सके। इस सृष्टि में काल के दो रूप हैं। पहला रूप ''स्थूल काल'' सूर्य है और दूसरा रूप ''सूक्ष्म काल'' ब्रह्मण्डी मन है।

''अब विचार करने की आवश्यकता है कि किसी भी कार्य के पीछे कोई कर्ता अवश्य होता है, बिना कर्ता के कार्य हो ऐसा कभी संभव नहीं है। सम्पूर्ण संचालित मशीन की भांति क्रियाशील है। किन्तु स्वचलित मशीन का कोई निर्माता अवश्य होता है ऐसा नहीं कि वह स्वयमेव बनकर चलने लग गये। ठीक

यही बात इस सृष्टि की भी है। एक कर्ता निर्माता अवश्य है, जिसने अपने संकल्प द्वारा इसका निर्माण किया तथा इसे क्रियाशील किया।

उदाहरणार्थ : शरीर एक स्वचालित मशीन है किन्तु इसका संचालक एवं नियामक भी है, ऐसा नहीं है कि नियामक के बिना शरीर स्वयं गतिशील है। जब तक वह शरीर में विद्यमान है तब तक इसे अपने संकल्प द्वारा चलाता रहेगा, जिस क्षण उसका इस शरीर से सम्बन्ध -विच्छेद हो जायेगा, शरीर क्रिया शून्य होकर समाप्त हो जाएगी।

सूर्य रूप त्रिगुणात्मक काल की गति को कोई विरला ही जानता है। सूर्य के माध्यम से ही समस्त जीव जगत उत्पन्न होता है। पलता-फूलता है, अन्त में मृत्यु या विनाश को प्राप्त होता है। अण्डज् पिण्डज उद्भिज, स्वेदज चार प्रकार के जीवों की सृष्टि सूर्य पर ही निर्भर है।

त्रिगुण - सुबह, दोपहर, शाम, सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण, उत्पत्ति, पालन प्रलय के प्रतीक हैं। इस त्रिगुणात्मक सृष्टि के रहस्य को सभी देखते हैं, किन्तु इसकी वास्तविकता को नहीं जानते।

यह त्रिगुण देखने में भले ही अलग-अलग रूपों में दिखाई देते हो, किन्तु तीनों का रूप अर्थात् परिणाम एक ही है, त्रिगुण रूप काल के इस रहस्य को बिना सद्गुरू के ज्ञान द्वारा कोई भी समझने में सक्षम अर्थात समर्थ नहीं यह सूर्य काल सभी जीवों के ऊपर निरंतर अपना शासन जमाये हुए हैं।

साखी

करता धरता होय रहा, तीन लोक प्रचंड।

अमर लोक तिहुँ पुर परे, जैवहाँ शब्द अखण्ड ।।1।।

टीका : यह स्थूल काल रूपी सूर्य तीनो का नियन्त्रक स्वामी है। इसी के द्वारा उत्पत्ति, पालन, प्रलय जैसे कार्य नित्य प्रति होते हैं। इसलिए इसे काल का देश कहा जाता है। वहाँ पर जीवों को कभी भी सुख-शांति नहीं मिल सकती। जहाँ जीवों को जन्म-मरण का असहनीय दुःख नहीं मिलता, ऐसा वह अमरलोक तीनों लोकों से बाहर है। वह अमरलोक सारशब्द की अखण्ड ध्वनि से परिपूरित परमानन्द है।

चौपाई

तहाँ काल को नाही वासा। कोई सन्त जन करें निवास ।।1।।

टीका : उस अमरलोक में काल की गति किसी भी रूप में सम्भव नहीं, उस अमरलोक में कोई विरले सन्त ही गुरू ज्ञान प्राप्त करने के बाद पहुँच पाते हैं।

चौपाई

बिन पहुँचे वोहि देश के, छूटे न काल झकोर।।

बिन गुरू मदन न निस्तरै, कठिन काल का जोर ।।1।।

टीका : जब तक जीव उस अमर लोक में नहीं पहुँचेगा, तब तक जन्म-मरण रूप असहनीय दुःख से छुटकारा सम्भव नहीं, तब कल्याणमयी कार्य बिना सद्‌गुरू ज्ञान के अन्य किसी भी उपाय द्वारा सम्भव नहीं, क्योंकि काल अति बलशाली है। वह सहज किसी को अपने देश से निकलने नहीं देता। बड़े-बड़े योगी, ध्यानी, ज्ञानी भी इस काल की चपेट से नहीं बच पाये, तो साधारण मनुष्य की क्या गणना।

चौपाई

तीनों गुण का निर्णय कीन्हा। गुरू कबीर की साखी दीन्हा।।1।।

गुरू कबीर की साखी मानो। तीनों गुण का घर पहिचानो।।2।।

टीका : सद्‌गुरू मदन साहब कहते हैं कि मैंने सद्‌गुरू कबीर के साखी के माध्यम से साक्षी देकर तीनो गुण का असली स्वरूप आपके सबके समक्ष प्रस्तुत कर दिया। यदि आपको मेरे माध्यम से सद्‌गुरू के साक्षी पर पूर्ण विश्वास हो तो अपने आत्म कल्याण के लिए काल रूप तीनो गुणों के रूप को परख लो और स्वयं को इनसे मुक्त कर लो, तभी इस द्वन्द्वात्मक सुख-दुःख रूप महाभयानक काल जाल से छुटकारा पाना सम्भव है।

साखी

तीनो गुण घर चीन्ह के, चीन्ह आदि निजदेश।

मदन जियत निज घर चले, छूटे काल कलेश ।।1।।

टीका : सद्गुरू मदन साहेब कहते हैं कि तीनों गुणों के घर को भली प्रकार जान लो, ताकि पुनः ये तुम्हे अपने जाल में न फाँस सके। जब तीनो गुणों की असलियत का भली प्रकार से ज्ञान हो जाये, तब अपने उस देश को जानने का प्रयत्न करो। जहाँ से बिछुड़कर इस काल के देश में बन्दी हो गए। ऐ जिज्ञासु साधकों आप अपने जीवन काल में ही अपने मूल निवास स्थान पर मार्ग खोल ले, ताकि काल के महान दुःख से छुटकारा मिल जाये।

बीजक शब्द

विरवा न होय भाई विरवा न होय ।

आधै बसै पुरूष आधै बसै जोय ।।1।।

बिरवा एक सकल संसार

पेड़ एक फूटी तीन डार।।2।।

बारह पखुरी चौबीस पात ।

धन बिरवा लागल चहुँ पास।।3।।

फूलै न फलै बाकी है बानी।

रैन दिवस विकार चुवै पानी।।4।।

कहै कबीर कछु अहलो न तहियाँ ।

हरि बिरवा प्रति पालेव जहियाँ।।5।।

टीका : इस संसार रूपी वृक्ष के दो भाग हैं एक भाग पुरूष रूप दिन तथा दूसरा भाग स्त्री रूप रात्रि है। पुरूष रूप दिन और स्त्री रूप रात्रि के अन्तर्गत समस्त क्रियाएं उत्पत्ति, पालन, प्रलय सम्पन्न होती है। संसार रूप वृक्ष से तीन शाखाएं प्रातः, दोपहर एवं शाम निकली हैं। इनमें बारह महीने और चौबीस पखवारे हैं इन्हीं के द्वारा यह संसार वृक्ष साधन रूप होकर सभी जीवों को अपने

आप में समाहित किए हुए हैं। इसे संसार रूपी वृक्ष के नीचे सभी जीव युग-युगान से जन्मते मरते चले आ रहे हैं। कोई भी इससे अछूता नहीं। इस वृक्ष में न तो कोई फूल और न तो कोई फल लगता है। मात्र, काम, क्रोध मत्सर जैसे नाना विकारों का दिन रात पानी टपकता रहता है, जिसको पीकर संसार के समस्त जीव सुखी-दुःखी होते रहते हैं। सद्गुरू कबीर साहब कहते हैं कि इस काल रूप वृक्ष में इन विकारों के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं मात्र जीवों को फँसाने के लिए काल ने इस वृक्ष को संसार में उगाया है।

बीजक चौपाई

ज्ञानी चतुर विलक्षण लोई एक सयान, सयान न होई।।1।।

दूसरे सयान को मर्म न जाना, उत्पत्ति, प्रलय, रैन विहाना।।2।।

वाणिज एक सबन मिल ठाना, नेम, धर्म, संयम भगवाना।।3।।

हरि अस ठाकुर तजा न जाई, बालम, बिहिश्त गावै दुहलाई।।4।।

टीका : इस त्रिगुणात्मक सृष्टि के तीन अधिष्ठाता हैं- सतोगुण रूप विष्णु, रजोगुण रूप ब्रह्मा तथा तमोगुण रूप शंकर से तीनो नाम रूप से भले ही अलग दिखाई देते हों, किन्तु तीनों का एक ही रूप निरञ्जन का ही है। ये तीनों अपने-अपने गुणों के माध्यम से जगत जीवों को अपने जाल में फँसाये रहते हैं। अज्ञानी संसार लोग इस रहस्य को न जानने के कारण इन तीनों गुणों की भक्ति में अपना अमूल्य जीवन नष्ट कर देते हैं। अर्थात इन तीनो गुणों के अन्तर्गत समस्त जीव दिन-रात जन्मते मरते रहते हैं। इतना ही नहीं उन तीनों ने अलग-अलग ढंग से मनुष्यों का संयम नियम, पूजा-पाठ, तीर्थ, व्रत आदि कर्मों में फँसाकर जीवन प्रलोभन भी दे रखा है। जगत जीव प्रलोभन में फँसकर इस काल रूप भगवान को अभी तक नहीं छोड़ पा रहे हैं। इन तीनों के एक मात्र व्यापार जगत जीवों को अपने चंगुल में फंसाकर जन्म-मरण रूपी चक्र में डालकर असहनीय दुःख देता है।

कबीर बीजक-साखी

कबीर तेनर कहाँ गये, जिन दोन्ही गुरू घटि।।

सत्यनाम जिन चीन्ह के, छोड़ि देहु सब खोटि।।1।।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि उन मनुष्यों को क्या हुआ, जिन्हें संसारी गुरूवां लोगों ने अपने उपदेश का मंत्र देकर स्वर्ण या मुक्ति प्राप्ति का लालच दिया था। कहने का आशय यह है कि ऐसे लोग अज्ञान वश काल के मुंख में चले जाते हैं। अतः यदि अपने आपकी आत्मा का कल्याण करना चाहते हो तो प्रभु परमात्मा के नाम को जान लो तथा जो अज्ञान रूपी विकार तुम्हारे अन्तस में छिपा हुआ है उसे त्याग दो, तभी आत्म कल्याण सम्भव है।

"कबीर साहेब की शब्दावली के शब्द"

ऐ जियरा तू अमर लोक के परयो काल वश आई हो।

मनहिं स्वरूपी देव निरंजन, तुमहि राखि भर्माई हो।

पाँच पचीस तीन का पिंजरा, तामै तुमको राखै हो।

तुमको बिसर गई सुधि घर की महिमा आपन भाखै हो।

निराकार निरगुण है माया, तुमको नाच नचाव हो।

चर्म दृष्टि का कुल्फा दें के चौरासी भर्मावै हो।।

चार वेद जाकी है स्वाँसा, ब्रह्मा स्तुति गाई हो।

सो कधि ब्रह्मा जगत भुलाया, तेहि मारग सब जाई हो।

योग, यज्ञ, नेम, व्रत, पूजा, बहुपरपंच अपारा हो।

जैसे बाधिक ओट टाटी के दे विश्वास अहारा हो।।

सद्‌गुरू पीव जीव के रक्षक तासे करहु मिलाना हो।

जिनके मिले परम सुख उपजे पावो पद निर्वाना हो।

जुगन जुगन हम आय चेतावा कोई कोई हँस हमारा हो।

कहै कबीर ताहि पहुँचावा, सत्य पुरूष दरबारा हो।।

शब्दावली की टीका : सदगुरू कबीर साहब इस काल के देश में बन्दी बने जीव को सचेत करते हुए कहते हैं कि ऐ अमरलोक के वासी तू अपनी हठ एवं अज्ञानता के कारण ब्रह्माण्डी काल के वशीभूत हो गया है। जो भूत, भविष्य, वर्तमान के रूप में तुम्हारे ऊपर अज्ञात रूप से शासन कर रहा है। यही नहीं तू स्वयं की "कल्पित भावना" जिसे मन कहते हैं कि भ्रम में पकड़कर अपने स्वरूप को भूल गया है तथा इस मन को ही अपना कर्ता, धर्ता, स्वामी मान रहा है। यही तेरे सम्पूर्ण दु:खों का कारण है। मन कल्पित इस पाँच भौतिक त्रिगुणात्मक शरीर में बंध गये हो। तुम अपने मूल घर को पूरी तरह से भूल गये हो। जिसके कारण अब इस शरीर को ही अपना घर मानने लगा है। मन एवं शरीर के मोह में तू यह भूल गया है कि तुझे इस शरीर एवं मन के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता है। यह मन एवं मन की इच्छा दोनों ही निराकार है। मन की नाना इच्छायें ही तुम्हे अदृश्य रूप से इस संसार में भरमा रही है। तू इन्हीं इच्छाओं से वशीभूत होकर शुभाशुभ कर्म करके सुख-दु:ख का भोक्ता बनता है। इन्हीं कर्मों के वशीभूत होकर तुम्हें नाना योनियों में जन्मना एवं मरना पड़ता है। इस मन रूपी काल की श्वाँसा चार भेद है। जिसकी स्तुति सर्वप्रथम ब्रह्मा ने की, ब्रह्मा ने वेदों के माध्यम से सारे जीवों को इस ओर आकृष्ट करके भुलावे में डाल दिया जिसके कारण समस्त जगत योग, जप, तप, संयम, नियम, व्रत, पूजा पाठ आदि नाना प्रपंचों में भूल गया यह समस्त प्रपंच जीव को छलने के लिए काल ने ओट रूप बना रखे हैं। जिसकी आड़ (ओट-परदा) में वह जीवों का वध करके स्वयं खा जाता है। यदि अपना कल्याण चाहते हो तो इस काल का विश्वास मत करो अपितु उन सद्गुरू देव से प्रयत्न करो, जो जीव की रक्षा करने वाले हैं जिनके मिलने से परम सुख और मुक्ति पद की प्राप्ति, सद्गुरू कबीर साहब कहते हैं कि मैंने हर युग में जीवों को उपदेश दिया कि किस तरह से काल के जाल से छुटकारा मिल सकता है किन्तु उनमें से कोई विरला ही मेरे कहने पर विश्वास किया। जिन्होंने मेरी बातों पर विश्वास किया उन्हें दरबार में पहुँचाकर मुक्ति का भागीदरी बनाया।

बीजक साखी

काल खड़ा सिर ऊपरे तै चेत विराने मिन्त।
जाको घर है गैल में, सो कस सोवे निश्चिन्त।
कालकाठी कालो घुनो, जतन जतन घुन खाय।
काया मध्ये काल वसतु है, मर्म न पावे कोई।
झिलमिल झगड़ा झूलते बाकी छूटन काहू।
गोरख अटके काल पुर, कवन कहावे साहु।
पावन पुहुमी नापते दरिया करते छाल।
हाथम पर्वत तौलते ते धर खायो काल।
तीनो गुण का खेल है, उपजै खपै संसार।
चौथा समरथ लोक है ताको करौ विचार।

टीका : सूर्य रूपी काल के माध्यम से दिन रात्रि हो रहे हैं जिनमें जगत जीव दिन भर भरण-पोषण जीविका उपार्जन की गतिविधि में लगे रहते हैं। सारा जीवन काम और विश्राम में निकल जाता है। उन्हें यह ख्याल ही नहीं कि हम अपन प्रभु परमात्मा को जानें और उसका स्मरण, ध्यान करें। इसलिए सावधान करके कहा जा रहा है कि तुम्हारे सिर पर काल खड़ा है, तुम सचेत हो जाओ। तुम्हारा घर तो काल के मार्ग पर पड़ता है। काल को जिस क्षण अवसर मिलेगा, तुम्हारे ऊपर हमला करके समाप्त कर देगा। ऐसी स्थिति में जो बेफिक्र सो रहा है वह अज्ञानी है जिस तरह किसी काठ के अन्दर घुन कीड़ा लग जाने से अन्दर ही अन्दर खोखला करके नष्ट कर देता है। ठीक इसी तरह मन रूपी घुन (काल रूपी निरञ्जन) मनुष्य के शरीर को निरन्तर नाना कल्पनाओं एवं चिन्ताओं के द्वारा नष्ट कर रहा है। इस रहस्य को कोई नहीं जानता। ऐसी स्थिति में मनुष्य को सावधान होकर जीना चाहिए, क्योंकि 24 घन्टों में 21600 स्वाँसा निकलती है। प्रत्येक स्वाँसा अमूल्य हैं।

विदेही कहे जाने वाले राजा जनक ज्योति का दर्शन करके काल के चक्र में फँस गये अर्थात पंच तत्वों से उत्पन्न प्रकाश रूप ज्योति को ही वे परमात्मा

मान बैठे। इतना ही नहीं, गुरू गोरखनाथ मृत्यु के भय से शून्य में समाधिस्थ हो गये, अर्थात वे भी काल जाल से अपने आपको सुरक्षित नहीं कर पाये।

जिन्होंने इस पृथ्वी को अपने तीन पगों द्वारा नाप डाला, समुद्र को लांघ गये, ऐसे महारथी योद्धा भी काल से अपने आपको सुरक्षित नहीं कर पाये।

यह समस्त त्रिगुणात्मक सृष्टि सतोगुण, तमोगुण, रजोगुण काल का खेल है। सृष्टि के समस्त जीव इन्हीं तीनों गुणों के वश होकर जन्मते व मरते हैं, प्रभु परमात्मा का घर इन तीनों गुणों के बाहर है उसके प्रति ठीक-ठीक विचार करो, तभी काल जाल से मुक्ति सम्भव है।

चौपाई

त्रिगुण खेल गुरू दिया गवाही। समुझ लेहु तुम चित्त चढ़ाई।।

टीका : इस त्रिगुणात्मक सृष्टि का खेल जन्म एवं मरण इसकी साक्षी सद्गुरू कबीर साहेब ने दी, इसे भली प्रकार अपनी विवेक दृष्टि द्वारा जान लो, समझ लो

साखी

समझो चित्त चढ़ाये के, धरो नाम कड़हार।
आड़ अटक फिर न रहे, उतरि जाय भवपार।।1।।

टीका : काल की त्रिगुणात्मक सृष्टि को भली प्रकार समझ लीजिए। इसके बाद अपने कल्याण रूप प्रभु परमात्मा के नाम को पकड़कर इस भवसागर से पार उत्तर जाओ। जो जिज्ञासु इस रहस्य को भली प्रकार समझ लेंगे, उनके हृदय में किसी प्रकार का संशय भ्रम नहीं रहेगा।

(दूजा भेद समाप्त)

10. अथ सारशब्द-तीजा भेद

चौपाई

तीजा भेद मैं कहाँ गंभीर। जांहि भेद से मिलैं कबीर।।1।।

गुरू कबीर का सब घट वासा। गुप्त प्रगट कछु अजब तमाशा।।2।।

जहाँ संत तहाँ परगट भयऊँ। जहाँ असंत गुप्त तह रहेऊ ।।3।।

गुप्त प्रगट कैसे कै बूझै। बिन गुरू ज्ञान आँख नहि सूझै।।4।।

सब की कहँ कबीर कहावै। जेहि लखि परै सो मो मन भावै।।5।।

टीका : तीसरे भेद में सद्‌गुरू मदन पति साहेब जीवात्मा तथा गुरू में एकरूपता दिखाते हुए यह स्पष्ट करते हैं कि तात्विक दृष्टि में आत्मा तथा सद्‌गुरू कबीर में कोई भेद नहीं है अर्थात गुरू और शिष्य आत्म स्वरूप से एक जैसे हैं। भेद केवल इतना ही है कि सद्‌गुरू कबीर जीवन मुक्त आत्मा है वे सदैव ज्ञानावस्था में रहे जिसके कारण वे दो बंधन में नहीं बंधे तथा जीवात्मा अज्ञान के कारण मुक्तावस्था से दो बन्धन में बंध गई। शुद्ध निर्मल आत्मा सद्‌गुरू कबीर साहब का ही रूप है।

सद्‌गुरू मदन साहब जी कहते हैं कि तीसरे भेद के माध्यम से सद्‌गुरू कबीर साहेब के स्वरूप का परिचय दूँगा। यद्यपि यह भेद कुछ कठिन अवश्य है, किन्तु कुछ भी हो, जिज्ञासु इसको समझ कर सदगुरू कबीर साहब के सन्दर्भ में निभ्रान्ति हो जायेंगे, सद्‌गुरू कबीर आत्म दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति के घट घट में रम रहे हैं। उस घट में उनका रूप प्रत्यक्ष है, जिसे आत्म परमात्म स्वरूप का यथार्थ बोध हो गया है, तथा उस घट में गुप्त है, जिसे आत्म परमात्म स्वरूप को बोध ज्ञान नहीं हुआ है। गुप्त एवं प्रगट के इस रहस्य को वही समझने में सक्षम या समर्थ होंगे। जिन्हें सद्‌गुरू का ज्ञान उपदेश प्राप्त हो जायेगा। बिना उपदेश ज्ञान का साक्षात्कार हुए कोई भी मनुष्य सद्‌गुरू कबीर के स्वरूप को समझने में सफल नहीं होगा। जहाँ भेदी संत महात्मा हैं वहाँ सद्‌गुरू कबीर प्रगट रूप से प्रत्यक्ष हैं। जहाँ अज्ञानी लोग हैं वहाँ वे गुप्त हैं। जबकि ज्ञानी अज्ञानी दोनों में तात्विक रूप से एक समान विद्यमान रहते हैं।

जो आत्मा-परमात्मा तथा माया के भेद को भली-भाँति रूप से कहने में समर्थ हैं, वही कबीर है। सद्गुरू कबीर कहते हैं कि मेरा यह ज्ञान जिसे भी भलीप्रकार दृष्टिगत होता है, वही मेरा प्यारा है अर्थात वही मुक्ति पद का अधिकरी है।

साखी

आदि कहा अब कहत है, अंत कहेगा सोय।

सो वक्ता जेंहि लाखि परै, तेहि परिचय गुरू होय ।।1।।

टीका : जिस जिज्ञासु साधक को भेदी संत सद्गुरू के द्वारा गुरू एवं आत्म-परमात्म परिचय हो जाता है, ऐसा साधक इस ज्ञानको अच्छी प्रकार कहने में समर्थ हो जाता है। इतना ही नहीं, उसके अन्तस्थ की सारी भ्रांतियाँ स्वयंमेव दूर हो जाती है, आत्म-परमात्म ज्ञान हो जाने पर ऐसा साधक अपने आपको तारने वाला हो जाता है। अर्थात वह स्वयं ही स्वयं के द्वारा तर जाता है।

चौपाई

आप कहै आप निरूवारै, आपै तरै आप को तारै ।।1।।

तारन तरन आप हैं भाई, गुरू सेवक दुई नाम धराई।।2।।

टीका : संत सद्गु— के द्वारा आत्म परमात्म परिचय होने के बाद साधक स्वयं को तारने के साथ-साथ दूसरे को भी तारने में सहायक होता है अर्थात स्वयं सद्गुरू रूप हो जाता है। इससे यह स्पष्ट है कि गुरू और सेवक कहने के तो दो होते हैं, किन्तु ज्ञान होने पर गुरू सेवक एक ही रूप हो जाते हैं। मात्र कहने को ही गुरू और शिष्य दो नाम होते हैं।

साखी

आदि गुरू का ज्ञान लेइ, कीन्ह पुकार कबीर।

नाम कहे सो भूल है, ज्ञान लखें सौ धीर।।1।।

देत लखाई आपनो, आप कबीरा साखि।

मदन सोई जन बूझि हैं, जाको दिल की आँखि।।2।।

टीका : सद्गुरू मदन साहब कहते हैं कि सद्गुरू कबीर साहब ने परमात्मा के ज्ञान को लेकर ही संसार में परमात्म ज्ञान का प्रचार किया है जो साधक जिज्ञासु बावन अक्षरों के द्वारा निर्मित नाम का जप करके आत्मा-परमात्मा का अनुभव करना चाहते हैं, वे सर्वथा भूल में हैं। ऐसी स्थिति में बावने अक्षरों के नाम को छोड़कर जो आत्मा परमात्मा के स्वरूप ज्ञान का परिचय प्राप्त करेंगे, वही इस काल जाल से मुक्त होकर जन्म मरण से छुटकारा पायेंगे।

पुनः समझने के लिए मदन साहब कहते हैं कि अपनी आत्मा ही सद्गुरू कबीर के रूप में अपने अन्तस में साक्षी देने लगती है, यह रहस्यमयी ज्ञान वही पूछेंगे, जिन्हें अपनी अर्न्तदृष्टि का ठीक-ठीक बोध विचार हो गया है। बिना अर्न्तदृष्टि खुले आत्म-परमात्म की सच्ची जिज्ञासा पैदा नहीं होती। अर्न्तदृष्टि से सत्य-असत्य का पूरा-पूरा निर्णय साधक स्वयमेव करने में सफल हो जाता है। ऐसा साधक किसी पक्षपात, दुराग्रह आदि में नहीं फँसता।

झूलना

तुम जानते हो हम कौन हैं जी, तुम खूब हमें पहिचानते हो।।1।।

हमें बिना तुम्हें कौन कहै। इस भेद को क्या तुम जानते हो ।।2।।

हम नहीं खयर तुम ही सही। हमै काहै को बीच में सानते हो ।।3।।

कहै कबीर तुम हमें में आय के। बैठ के ज्ञान विचारते हो ।।4।।

टीका : सद्गु— कबीर साहेब बावन अक्षरों के प्रति संकेत करते हुए कहते हैं कि ऐ बावन अक्षरों क्या तुम मुझ आत्मा को जानते हो ? अर्थात तुम मुझे आत्मा को न तो जानते हो और न ही पहिचानते हो। ऐ बावन अक्षरों मुझ आत्मा के बिना तुम्हे कौन कह सकता है? क्या इस भेद को तुम जानते हो ? अर्थात तुम्हे इसका भी बोध ज्ञान नहीं। पुनः बावन अक्षरों को सम्बोधित करते हुए सद्गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि माना। तुम्ही तुम हो मैं नहीं तो तुम स्वयं ही अपने आप प्रगट क्यों नहीं हो जाते ? अर्थात यदि मैं तुम्हें उत्पन्न न करूँ तो स्वयं उत्पन्न नहीं हो सकते, तब तुम हो श्रेष्ठ या मैं कहने का आशय यह है कि बावन अक्षरों की उत्पत्ति चैतन्य आत्मा से हुई है। तब बावन अक्षरों के द्वारा चैतन्य आत्मा का ज्ञान कैसे संभव है किन्तु आश्चर्य है कि संसारी गुरूआ लोग मन्त्र जाप के द्वारा

आत्म-परमात्म ज्ञान कराने का दावा करते हैं यह कहाँ तक सत्य है? क्या अब भी किसी से छिपा रह गया ?

सद्‌गुरू कबीर साहब जी कहते हैं कि ऐ बावन अक्षरों। तुम मुझ चैतन्य आत्मा के द्वारा ही तो किसी भी ज्ञान का विचार, चिन्तन, ध्यान करते हो, यदि तुम्हें मैं अपने में आश्रय न दूं तो तुम्हारा अपना न तो अलग से कोई स्वरूप बन सकता है और न ही तुम्हारा अलग से कोई आस्तित्व है।

चौपाई

कासे कहूँ कहा नहिं जाई। मेरी गति कोई जानै न भाई।।1।।

हमीं दास दासन के दासा अगम अगोचर हमरे पासा।।2।।

यहाँ-वहाँ पाहि दुई ठाऊँ। सत्य कबीर कलि में मोर नाऊँ।।3।।

जो लेता हमहीं पुनि सोई। नाम धरे भूला सब कोई।।41।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहब कहते हैं कि मैं गुरू एवं आत्म परिचय के भेद को किससे कहूँ? क्योंकि मेरे वास्तविक स्वरूप का ज्ञान किसी को नहीं है। आत्मा स्वयं ही अपने से उत्पन्न होने वाले बावन अक्षरों के रहस्य को न समझने के कारण उल्टा बावन अक्षरों की दास बन गई है। यह न ही सही आत्मा गुरू शिष्य सम्बन्ध से एक दूसरे की दास बन जाती है। अगम अगोचर परमात्मा के ज्ञान का रहस्य मैं ही जानता हूँ और समस्त आत्माओं को मैं ही सद्‌गुरू रूप से प्रगट होकर उनके स्वरूप तथा परमात्मा के स्वरूप का ज्ञान कराता हूँ।

इस भौतिक संसार में तथा परमात्म लोक दोनों में मैं ही रूप से जीवों को साक्षी देकर उन्हें आत्म-परमात्म ज्ञान का उपदेश करता हूँ। कलयुग में सत्य कबीर के नाम से प्रगट हुआ हूँ।

बावन अक्षरों को कहने वाला मैं आत्मा ही हूँ। नाम रखने से अक्षर बोले जाते हैं, वे मुझसे ही तो उत्पन्न होकर नाम के रूप में प्रकट हैं। अक्षर नाम रूप मुझसे भिन्न नहीं अपितु मेरी ही छाया या प्रति है। अक्षर रूप प्रकट होने से संसारी लोग भूल जाते हैं अर्थात उन्हें ज्ञान नहीं कि ये अक्षर आत्मा से ही प्रकट होते हैं अलग से इनका कोई आस्तित्व नहीं।

मैं तो सब की कहीं, मोके कोठ न जान।।

तब भी अब भी अच्छा, जुग जुग होठ न आन।।1।।

मसि कागज छुव नहीं, कलम ही नहीं हाथ।।

चारों जुग की महात्म, कबीर मुखहि जनाई बात।।2।।

बिन गुरू ज्ञान द्वन्द भौ, खसम कहीं मिल बात ।।

जुग जुग से कहवाइया, काहू न मानी बात।।3।।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहब कहते हैं कि मैं माया सृष्टि रचना आत्म तथा परमात्मा के भेद को भली प्रकार कह दिया किन्तु मेरे को किसी ने नहीं जान पाया कि मैं सृष्टि के आदि में भी बन्धन मुक्त शुद्ध निर्मल था और आज भी बन्धन मुक्त निर्मल हूँ। प्रत्येक युग में जीवों को चेताने के लिए इसी रूप में आता रहा हूँ। किसी युग में मैं दूसरा रूप बदल कर नहीं आया, क्योंकि आत्मा स्वरूप से एक जैसे हैं, उसमें यदि रूपान्तरण होता है तो मात्र माया के सम्पर्क से अर्थात आत्मा माया के सम्पर्क से शरीर धारण करके विभिन्न रूपों तथा शरीरों के माध्यम से अन्य-अन्य रूपों में दिखाई देने लगती है।

कबीर साहेब कहते हैं कि जब-जब इस सृष्टि में जीवों को बन्धन से मुक्त करने आया हूँ, तब-तब मैंने स्याही, कागज एवं कलम का आश्रय नहीं लिया, अपितु आत्म परमात्म ज्ञान को सदैव शब्दों के द्वारा ही व्यक्त किया है। चारों युग में इस ज्ञान को वाणी के माध्यम से व्यक्त करके इनकी महत्ता एवं श्रेष्ठता का बखान किया है।

पुनः सद्‌गुरू कबीर साहब आत्म-परमात्मा के ज्ञान की श्रेष्णता को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि बिना सद्‌गुरू के सच्चे ज्ञान के कारण इस संसार में साम्प्रदायिक मत, पंथ आदि का झगड़ा फैला हुआ है। सभी अपने-अपने इष्ट की श्रेष्ठता का बखान करते हैं, कोई सत्य निर्णय पर विचार नहीं करता।

मैंने प्रत्येक युग में आत्म-परमात्म की बात कही, किन्तु इन झगड़ने वालों में से किसी ने भी हठधर्मीवश मेरी बात पर विश्वास नहीं किया।

छप्पय

पूरो पूरण प्राण ते और न कोई।

कायाबीर कबीर परम गुरू निश्चय सोई।।4।।

टीका : इस स्थूल शरीर में सर्वत्र प्राणवायु का संचार है। यह प्राण वायु ही चौतन्य आत्मा का सानिध्य प्राप्त कर इस शरीर को गतिमय किये हुए है। प्राणवायु और शरीर को गतिमान करने वाली चेतन आत्मा ही इस शरीर या कारण की मूल निधि है। दूसरे शब्दों में यही चेतन आत्मा कबीर है और यही कबीर परम सद्गुरू कबीर साहब का रूप है अर्थात सद्गुरू कबीर और चेतन आत्मा स्वरूप से एक समान एक जैसे हैं। उनमें कोई भेद नहीं है।

बीजक साखी

सब वजूद के अंदरे, है मौजूद कबीर।

मोहि सुलभ कर देखिए सबहिन में हैं पीर।।

टीका : सभी प्राणियों के अन्दर यह चेतन आत्मा विद्यमान है। यह चेतन आत्मा ही सद्गुरू कबीर का रूप है। सद्गुरू कबीर कहते हैं कि थोड़ा विचार कर देखिए, मैं सभी शरीरों में ज्ञान रूप में विद्यमान हूँ अर्थात प्राणियों में ज्ञान शक्ति ही सद्गुरू कबीर का सच्चा स्वरूप है।

चौपाई

गुरू कबीर सत साखी दीया। जो नहि माने ताको छिया।।

टीका : सद्गुरू मदन साहेब कहते हैं कि मैं सद्गुरू कबीर को वाणी की साक्षी देकर सत्य ज्ञान का रहस्य सबके समक्ष प्रस्तुत किया। जो इस साक्षी (गवाही) पर भी विश्वास नहीं करेगा। वह अपने अज्ञानवश स्वयं आत्म ज्ञान से वंचित रह जायेगा तथा जन्म मरण के कुचक्र में यो ही नाना कलेश (दुःख) उठाता रहेगा।

साखी

समुझि भेद सतमत गहै, सोई संत सुजान।।

भेद बिना खाली घड़ा, सो नर बैल समान।।1।।

टीका : आत्म परमात्म भेद को समझकर जो सारशब्द (परमात्मा) को पकड़कर ले वहीं सच्चा संत है। यदि उसने सारशब्द को न जान पाया, तो उसका जीवन खाली घड़े के सदृश्य व्यर्थ है और ऐसा मनुष्य ज्ञानविहीन होने के कारण बैल के समान पशु तुल्य है।

(तीजा भेद समाप्त)

11. अथ सारशब्द–चौथा भेद

साखी

चौथ भेद विज्ञान को, कही सही सत् रीति ।

जो वासी वह देश के सो करिहँ परतीति।।1।।

टीका : विज्ञान दो प्रकार का कहा जाता है- 1. भौतिक (सांसारिक विज्ञान), 2. अध्यात्म विज्ञान (पारलौकिक ज्ञान)। भौतिक विज्ञान बुद्धि के विकास का ज्ञान है। प्रकृति का खोज ही विज्ञान है। अध्यात्म विज्ञान दो प्रकार का है। 1. वैदिक अध्यात्म विज्ञान, जो निरंजन ब्रह्मा भूमिका तक तथा तुरीय ज्ञान की जागृतावस्था कही जाती है, जो दृष्टा और साक्षी रूप है। इसके तुरीयातीत ज्ञान सुषोप्ति भूमिका है, जहाँ शून्यवत स्थित है। इन दोनो ही भूमिकाओं में निरंजन ब्रह्म रहता है।

ज्ञान का दृष्टा साक्षोतरीय भूमिका पर विद्या माया से संयुक्त सृष्टि का सृजन, पालन आदि सांसारिक क्रिया करता है। इस भूमिकापर ही ब्रह्म निरंजनसगुण ब्रह्म कहलाता है। इसके आगे ज्ञान की सुषोप्ति अवस्था है। यहाँ महाप्रलय के समय में ब्रह्म निरंजन, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी इन चारों तत्वों को स्थूल से सूक्ष्म परमाणुओं के रूप में शून्य में विलीन करके अपने मन को समेट कर निर्विकल्प निश्चेष्ट निष्क्रियात्मक रूप में कर देता है, पुनः जब सृष्टि रचना का समय आता है, तब ज्ञान की जागृत अवस्था पुनः हो जाती है और उससे सूक्ष्म एकोऽहम् स्फुरण उत्पन्न होती है तथा पुनः सृष्टि रचना करने लगता है।

प्रथमै सूक्ष्म भया अहं सोई कहावै एकोऽहम् ।

इस प्रकार यह भी महाकरण और कैवल्य की ज्ञान और सुषोप्ति की जागृतावस्था है। कैवल्य शरीर शून्यवत ज्योतिवत स्वरूप है इसे वेदांती रूप निज स्वरूप समझते हैं। अतः यह अवस्थाएँ देहान्तर्गत ही हैं। अब सद्गुरू कबीर इन दो अवस्थाओं के परे छह शरीर तथा तुरीय और तुरीयातीत भूमिकाओं के आगे विदेह विज्ञान स्वरूप महाचौतन्य परम पुरूष परमात्मा का वर्णन करते हैं।

चौपाई

अक्षर शब्द आदि जो आहीं ताको वास गुप्त नभ माही।।1।।

रहे उर्द्ध अर्द्ध में आवै। बिन गुरू कौन लखि नही पावै।।2।।

सत्य पुरूष वाही को जानो। बीज रूप ताको पहिचानो।।3।।

पाँच तीन उन्ही के अंशा। चार खान है ताको वंशा।। 4।।

ब्रह्मादिक उनहीं से भयऊ। चाँद सूर्य तासे निरमयऊ।।5।।

दश औतार प्रगट सो कीन्हा। जासे सब जग भये अधीना ।।6।।

तीन लोक का सकल पसारा । वही बीज का बिस्तारा।।7।।

ताको भेद संत जन जाना। जेहि कारण जग भये उत्पाना।।8।।

सुर, नर, मुनि, ऋषि पण्डित काजी। जन्म जात खेलत नट बाजी।।9।।

पीर, औलिया, नवी, रसूला। कर्म काल वश लखा न मूला।।10।।

बावन अक्षर संग भुलाना आदि अक्षर को मर्म न जाना।।11।।

आदि अक्षर को गर्म न पावै। भटकि भटकि फिर योनिन आवे।।12।।

जैसे बसत फूल पर बासा आदि अक्षर संग शब्द निवासा।।13।।

आदि अक्षर गुरू बिन नहीं पाये। गुरू पूरा होय सोइ लखावै।।14।।

बावन अक्षर जीभ अधारा आदि अक्षर जिहवा से न्यारा।।15।।

जो नर परे बावन के फेरा सो नर भये काल के चेरा।।16।।

उत्पति परलय बावन कीन्हा। काल के जाल पड़े जस मीना।।17।।

बावन सूत को जाल पसारा काल अहेरी गहि-गहि मारा।।18।।

कहो जीव कैसे के बाचौ। दूसह अग्नि में जरि-बरि नाचौ।।19।।

टीका : आदि अक्षर शब्द स्वरूपी जो चैतन्य आत्मा है। आदि अ क्षर क्यों कहा? अक्षर का अर्थ है जिसका नाश न हो, परिवर्तन न हो तो चैतन्य ज्ञानमय, अकह स्वरूप शब्दरूप है, वह समस्त पंचभौतिक, प्रकृतिमय, जड़ सृष्टि का कर्ता, विद्या, अविद्या, पिण्ड ब्रह्माण्ड, वर्णनात्मक और ध्वन्यात्मक शब्दों का

कर्ता-धर्ता है। इसलिए यहाँ आदि शब्द से चैतन्य आत्मा को संकेत किया है।

आदि अक्षर जो चैतन्य आत्मा है, उसका गुप्त रूप से नभ नाम आकाश पानी शून्य की सीमा के मध्य में वास है। अर्थात स्थित है। चैतन्य आत्मा स्वरूपतः शून्य के सीमा के ऊपर ही विद्यमान रहता है। वहाँ से उसकी चेतना शक्ति शून्य के अन्तर्गत प्रविष्ट हो कर मन एवं प्राणवायु से संयुक्त हो पिण्ड और ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो जाती है, क्योंकि पिण्ड ब्रह्माण्ड, विद्या, अविद्या आदि का प्रकाशक चैतन्य आत्मा है। बिन भेदी गुरू के इस आत्म भूमिका को कोई लख नहीं सकता। उस चैतन्य आत्मा को सत्पुरूष समझो। सृष्टि का बीज आदि कारण यही चैतन्य आत्मा है। पाँच तत्व तीन गुण इसी चैतन्य आत्मा से उत्पन्न हुए हैं। चार खानि तथा चौरासी लाख योनियों में भिन्न-भिन्न शरीरों में जो आत्म में विद्यमान है। वे सब इसी आत्मा के ही स्वरूप हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि त्रिदेव भी आत्मा से उत्पन्न हुए हैं। चन्द्रमा सूर्य आदि का निर्माण इसी आत्मा से हुआ है। इसी चैतन्य आत्मा से अंश रूप में दश अवतार भी हुए हैं। जिन अवतारों की कलाओं को देख के सारा संसार उनके अधीन हो गया, तीन लोक में भावज जितना भी फैलाव है, सब इसी चैतन्य आत्मा का ही विस्तार है। इस बीज रूप चैतन्य आत्मा का भेद भेदी सन्त ही जानता है। इस चैतन्य आत्मा का परिचय कराने के लिए ही भेदी संतजन इस संसार में प्रगट हुए हैं। सुर, इन्द्रादि, देव, नर, मानव प्राणी, मृत्युलोक वासी ऋषि मुनि तथा पण्डित, विद्वान, काजी, मुल्ला आदि इस चैतन्य आत्मा का स्वरूप भेद न जानने के कारण नटबाजी के खेल की तरह दुर्लभ मानव जीवन को व्यर्थ में गवां देते हैं।

इसी तरह पीर, औलिया, नवो, रसूल आदि जो मुसलमानों में हुए हैं इन सबों ने कर्मकाल के वश में होकर सृष्टि के मूल कारण चैतन्य आत्मा के वास्तविक स्वरूप को नहीं जान पाया और न ही उसको लख पाया। वे सभी बावन अक्षरों के अन्तर्गत स्वर व्यंजन संयुक्त शब्द मंत्रों के उत्पन्न जाल में उलझ गये तथा बावन अक्षरों शब्द मंत्र आदि का बनाने वाला उत्पन्न कर्ता आदि अक्षर जो कि चैतन्य आत्मा है, उसके सच्चे स्वरूप और भेद को नहीं जाना आदि अक्षर रूप जो चैतन्य आत्मा है, इसके सच्चे स्वरूप व भेद को नहीं जाना आदि अक्षर रूप जो चैतन्य आत्मा है इसके सच्चे भेद को लोग नहीं समझ पाते इसी कारण

आत्मस्वरूप के परिचय बिना नाना प्रकार की चौरासी लाख योनियों में जन्मते और मरते रहते हैं। यहाँ तक आत्म भूमिका का वर्णन किया गया है। इसके आगे सारशब्द परमात्मा का विवरण एवं वर्णन करते हैं।

जिस प्रकार फूल के ऊपर सुगन्ध वास करती है उसी प्रकार आदि अक्षर चैतन्य आत्मा के साथ सारशब्द परमात्मा का वास है, यहाँ पर आदि अक्षर चैतन्य आत्मा के ऊपर अर्थात आगे सारशब्द (परमात्मा) का वर्णन किया गया है।

अब यहाँ पर आदि अक्षर शब्द से सार ज्योति स्वरूप ब्रह्म निरंजन के प्रति संकेत करते हैं क्योंकि बावन अक्षरों का आदि कारण चैतन्य आत्मा है। इस कारण आदि अक्षर शब्द से चैतन्य आत्मा संकेत है और आदि अक्षर चैतन्य आत्मा का मूल कारण सारशब्द (परमात्मा) है। उस सार शब्द परमात्मा के भेद को बिना गुरू के कोई अपने आप नहीं पा सकता है जो पूरा होगा अर्थात आत्मा-परमात्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान होगा, वही आत्मा-परमात्मा के स्वरूप को यथार्थ रूप से लखा सकता है।

बावन अक्षर, ओष्ठ, कंठ, तालु, जिभ्या आदि स्थानों से उच्चारित किये जाते हैं और बावन अक्षरों को कहने वाला चैतन्य आत्मा जिभ्या से भिन्य अवाच्य है। जो मनुष्य बावन अक्षरों से निर्मित स्वर युक्त मंत्रादि के फेर में उलझे हुए हैं वे मानव प्राणी अवश्य ही काल रूप मन के गुलाम है। क्योंकि बावन अक्षरों की उत्पत्ति चैतन्य आत्मा से ही होती है और यह उसी आत्मा में विलीन भी हो जाते हैं। चैतन्य आत्मा से सर्वप्रथम 'अ' अक्षर उत्पन्न होता है। 'अ' अक्षर आत्मा का प्रतिबिम्ब है और आत्मा के ही स्वरूपाकार में है। इस प्रकार बावन अक्षरों की उत्पत्ति और प्रलय आत्मा से ही होती है। बावन अक्षरों का प्रकाशक तथा मंत्रादि का उत्पत्ति कर्ता जो चैतन्य आत्मा है उसके भेद को न जानने के कारण, जिस प्रकार से काल रूपी धीमर (मछुवारा) के जाल में मछली फँस जाती है, उसी प्रकार समस्त जीव बावन अक्षरों के जाल में मंत्रादि में फँस गये हैं। कालरूप धीमर (मछुवारा) का रूप अपना यह मन है।

इस प्रकार से संसार में सर्वत्र ही बावन रूप धागों का बना हुआ जाल है और मनरूपी काल सब जीवों को पकड़-पकड़ कर इसी काल जाल में फँसा कर शिकार कर रहा है।

ऐसी स्थिति में जीव किस तरह काल रूपी मन के जाल से बच सकता है। यह जीव बावन अक्षर शब्द मंत्रों की महा आग में जलकर निरन्तर दुःख पा रहा है। इसलिए बावन अक्षरों से परे जो आदि अक्षर चैतन्य आत्मा है। इसके भेद को अर्थात स्वरूप का परिचय नहीं पा सकता है। जिस पर भेदी गुरू दया करते हैं। वही भेद को जान सकता है, पहिचान सकता है और बतला भी सकता है।

साखी

आदि अक्षर सो पावै, जेहिं गुरू होहि दयाल।

बावन से बाहर करैं, तब छुटै घर काल।।1।।

जब टूटा घर काल का, परिचै भये दयाल।

आनन्द घर आनन्द भय समुझत शब्द रसाल।।2।।

टीका : जब गुरू की कृपा से जो शब्द सारशब्द (परमात्मा) का आदि अक्षर प्राप्त कर लेता है तो फिर चौरासी लाख योनियों में नहीं आना पड़ता है। जब जिज्ञासु काल रूप बावन अक्षरों से बाहर निकल जाता है। तब उसे अपने आत्म स्वरूप द्वारा दयाल महाचौतन परमात्मा का परिचय होता है और इस तरह जो आनन्द का घर 'सारशब्द' (परमात्मा) है, उसको पाकर यह दुःखी जीव स्वयं आनन्द रूप हो जाता है। जन्म-मरण के महादुःख से छुटकारा पा जाता है।

चौपाई

बावन का अब सुनिए भेऊ, यह गति जानत बिरला कोई।।1।।

चार भेद बावन निरमाई, छवो शास्त्र बावन उपजाई।।2।।

पुराण अठारह भगवत गीता, बिन बावन को परगट कीता।।3।।

बावन कीन्ह किताब कुराना, पीर पैगम्बर और रहिमाना।।4।।

जंत्र-मंत्र कलिमा जो कहै, बिन बावन कहे कैसे लहै।।5।।

जोग जाप तप संयम पूजा, बिना बावन करता नहि दूजा।।6।।

जह लग वाणी परकाश, सब पर बावन करें निवासा।।7।।

टीका : और अब पुनः बावन अक्षरों का विस्तार से वर्णन करते हैं। बावन

अक्षरों के रहस्य से ध्यान से पुनः सुनो, इसे कोई विरला तत्व का खोजी जिज्ञासु ही शास्त्रों का निर्माण बावन अक्षरों के द्वारा हुआ है। अठारह पुराण, गीता आदि की बावन अक्षरों के बिना किसी अन्य माध्यम से सम्भव नहीं है। इसे प्रकार के परिचय में जो पैगम्बर हुए हैं। उन्होंने भी बावन अक्षरों के द्वारा पुस्तकों की रचना की है। मूसा पैगम्बर की 'इंजील' नामक पुस्तक और मुस्तफा पैगम्बर जिसको 'मोहम्मद' कहते हैं। उसने भी 'कुरान शरीफ' नामक पुस्तक की रचना बावन अक्षरों के द्वारा ही को है। पौर पैगम्बर, रहिमान आदि नाम भी तो बावन अक्षरों के द्वारा रखे गये हैं। ॐ सोह कलिमा आदि मंत्र भी तो वाणी से कहे जाते हैं। जोग, जप तप, संयम, नियम पूजा आदि जो भी किया जाता है, वह सब का सब बावन अक्षरों के द्वारा ही सम्भव है।

साखी

आपै अग्नि उठाय के, आपै जरि-बरि जाय।

बोल अबोल सम लखि परे, तब आपै अग्नि बुझाय।।1।।

टीका : आप ही स्वयं चैतन्य आत्मा अज्ञान दशा में बावन अक्षरों को अग्नि संकल्प विकल्प के रूप में जला करके स्वयं ही उसी संकल्प-विकल्प में दुःखी-सुखी होता रहता है। प्रथम अक्षर 'अ' जो बावन अक्षरों का मूल है। जिससे सभी अक्षर बनते हैं एवं बावन अक्षरों को जो बनाने वाला है तथा जो बोलने के पूर्व अकह रूप में विद्यमान है। वो चैतन्य आत्मा अकह आकार है और वही चैतन्य आत्मा "शब्द" रूप है।

चौपाई

तब बावन का टूटै डोरा, सहजे टूटै काल झकोरा।।1।।

फिर नहि आवै फिर नहि जाई, आदि अक्षर में रही समाई।।2 ।।

आदि अक्षर गुरू दीन्हा, पारस छुइ तब पारस कीन्हा।।3।।

टीका : जब कह आकार 'अ' और अकह आकार चैतन्य आत्मा को साधक अभ्यास के द्वारा अनुभूति करके एक रूप में देखने लगता है, तब बावन अक्षरों के अग्नि जो संकल्प विकल्प के रूप में सुखी-दुःखी करती है, वह अपने आप शान्त

हो जाती है। तत्पश्चात वह चैतन्य आत्मा आदि अक्षर 'सारशब्द' परमात्मा में तदाकार हो जाता है।

आदि अक्षर सारशब्द रूपी पारस को गुरू शिष्य के प्रति प्रदान करती है। वो जीव लोहा भी पारस को स्पर्श करके पारस रूप बन जाता। है अर्थात जीवात्मा के समस्त विकार दूर हो जाते हैं तथा वह स्वयं परमात्मा के स्वरूप में मिलकर आनन्द मुक्त हो जाता है। उसके समस्त शुभाशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं।

साखी

पारस छुई पारस भये, लेह वर्ण मिटि जाय।

अवरण मिलि अवरण भये, काहे को काई खाये ।।1।।

टीका : अवरण सारशब्द परमात्मा से मिल कर यह चैतन्य आत्मा भी अवरण अर्थात समस्त आकार प्रकार से रहित हो जाता है। फिर उसे शुभाशुभ कर्मरूप काई नहीं लबती है। यह जीव मुक्त हो जाता है।

चौपाई

सोई गुरू पूरा कहवावे, दूर अक्षर का भेद लखावै ।।1।।

एक छुड़ावै एक मिलावै, तब निःशंक निज घर पहुंचावै।।2।।

सो गुरू बंदी छोड़ कहावै, बंदोछोड़ के जीव मुक्तावै ।।3।।

जग गुरूवा गति कही न जावै, जो कछु कहो तो मारन धावै।।4।।

टीका : एक ऐसा उपदेश देने वाला गुरू, पूरा गुरू कहा जाता है, जो दो अक्षर अर्थात बावन अक्षरों से परे चैतन्य आत्मा का साक्षात्कार करा देता है। इनमें एक जो बावन अक्षर निर्मित शब्द मंत्रादि है, उनको छुड़ाकर इनके परे चैतन्य आत्मा का परिचय करा देता है। जब आत्म स्वरूप का परिचय हो जाता है तो वह निःसंशय एवं निःशंक होकर अपने असली निज घर परमात्मा से मेल (परिचय) करा देता है। तब आत्मा परमात्का का एकीकरण हो जाता है अर्थात जो बावन अक्षर तथा सम्पूर्ण मायिक जल पदार्थों से भिन्न करके परमात्मा सत्ता में स्थित करा देता है।

जगत के गुरू जिन्हें आत्मा तथा परमात्मा का यथार्थ ज्ञान नहीं है। उनकी

गति एवं नाम चाल को कहा नहीं जा सकता है। यदि उनके सम्बन्ध में कुछ कहा जाये तो वे स्वयं अज्ञान के कारण उल्टा मारने को तथा वाद-विवाद को उद्यत हो जाते हैं।

चौपाई

चौबीस मन्त्र राशि किये बारह, उपनिदेशक कीन्हों नारह ।।5।।

बारह चौथी बारह माही, बायन के संग आवे जाहीं।।6।।

आगवागमन मिटै कौनी विधि, क्या जोगी जती-तपीऔ क्या सिद्धि।।7।।

बड़-बड़ जीवन का बावन खाया, समुझ न परी राम की माया।।8।।

टीका : जिज्ञासुओं को यह ध्यान देना चाहिए कि 24 मंत्र एवं 12 राशियों इत्यादि नाना प्रकार के प्रपंच आडम्बरों का उपदेश इन्हीं अज्ञानीगुरूआ लोगों ने किया तथा जीवों को जगत जाल में फंसाकर आत्मा परमात्मा के स्वरूप से वंचित कर दिया। यही मन्त्रादि राशियाँ सभी बावन अक्षरों के द्वारा निर्मित तथा कहे सुने जो हैं। स्थिति ऐसी है जिसमें, योगी, तपी, जती और क्या सिद्ध, कोई भी क्यों न हो इन्हीं बावन अक्षरों के जाल में फँसे हैं। इन सबका आवागमन कैसे मिट सकता है। बड़े-बड़े महापुरूषों को इन्हीं बावन अक्षर ने खा लिया, वे सभी इन्हीं को अपना उद्धारकर्ता मानकर तल्लीन हो गये। बावन अक्षर रूप इस मायावी की माया को कोई भी नहीं समझ पाया।

साखी

जिव असंख्य जहड़े गये, बिन समझे बिन भेद।

कोई हंस निरूवारिहैं, नीर क्षीर का भेद।।1।।

गहि सीढ़ी गुरू ज्ञान की चढ़ो महल निज देश

आतम परमातम मिले, सनु विज्ञान संदेश।।2।।

फिर आवै जावै नहीं, सरिता सिंधु समानी।

मदन पाय विज्ञान पद, भये चार अवस्था हानि ।।3।।

साखी भेद विज्ञान की, दीन्हौ गुरू कबीर।

जो माने सम क्षीर है, न मानै सम नीर।।4।।

जो मानै परतीत करि, होय भरम को नाश।1511

मदन क्या गुरूपद मिला, छूट गये यम फाँस।।5।।

टीका : अपने निज आत्मस्वरूप का भेद समझे बिना असंख्य जीव इन्हीं बावन अक्षरों के जाल में फँस कर नष्ट हो गये। उनमें कोई हंस अर्थात सत्यासत्य का विवेक जिन्हें आत्म परिचय वहीं हंस की तरह पानी एवं दूध को अलग कर सकने में समर्थ हुए, जब जिज्ञासु अक्षर रूप शब्द मन्त्रादिकों से अपने को भिन्न कर लेगा, तब वह गु– बताई हुई ज्ञान रूपी सीढ़ो के द्वारा अथवा सुरति के द्वारा अपने निज घर सारशब्द परमारत्मा में स्थित हो जायेगा अर्थात ब्रह्माण्ड रूपी प्रकृति माया मण्डल के ऊपर चढ़कर निज देश (सारशब्द) परमात्मा में पहुँच जायेगा। इस तरह आत्मा तथा परमात्मा का मिलान होगा। वहीं विज्ञान रूप आत्मा और परमात्मा के मिलने का संदेश है। फिर जीव का इसी तरह आवागमन मिट जाता है, जिस तरह नदी समुद्र में समा जाती है। यही रूप आत्मा के परमात्मा के रूप में तदाकार हो जाता है।

मदन साहेब कहते हैं कि जिस प्रकार जब विज्ञान स्वरूप सारशब्द परमात्मा को जिज्ञासु जन प्राप्त कर लेंगे, तो वह चारों अवस्थाओं जागृत, स्वप्न सुषुप्ति एवं तुरीय से रहित हो जाता है।

तुरीय अवस्था के दो स्वरूप हैं: .

1. अर्द्ध तुरीय 2. पूर्ण तुरीय

पूर्ण तुरीय को तुरीयातीत कहते हैं जो शून्यवत अवस्था है। मदन साहब कहते हैं कि इस प्रकार इस विज्ञान भेद को समझने के लिए सद्‌गुरू कबीर साहेब ने वाणी की साक्षी दी है। जो इस भेद को मानेगा अर्थात कबीर साहेब की साखी पर विश्वास करेगा, वह दूध की तरह सारग्राही है। जो नहीं मानेगा वह जाल की तरह आसार ग्राही है। जो कबीर साहेब की वाणी को विश्वास पूर्वक मान लेगा, उसका समस्त भ्रम दूर हो जायेगा। मदन साहेब कहते हैं कि मैंने गुरू कृपा द्वारा इस भेद को समझकर जान लिया है तथा मैं साहब की कृपा से काल निरंजन के जाल से छुटकारा भी पा गया हूँ। अब आगे सद्‌गुरू कबीर साहेब की शब्दावली

का शब्द साक्षी (गवाह) रूप में प्रस्तुत है।

कबीर साहेब की शब्दावली का शब्द

शब्द जो एक अगम अपारा, मर्म न कोई पावै हो।

रहै उर्द्ध अर्द्ध में आवै, तब जग जाहिर होई हो।।1।।

है जाहिर केउ जानत नाहीं, ताको कवन लखावै हो।

कोटि ज्ञान जप, तप करि हारे, बिन गुरू कवन बतावै हो।।2।।

कोटिक शब्द कहे मुख वाणी, एक शब्द हम गाई हो।

ताको भेद काल नहि पावै, सो सन्तन चित लाई हो।।3।।

आठौ अंश उन्ही से कहिए, सो सबहिन से न्यारा हो।

यह अक्षर वह है निरक्षर, सोई नाम हमारा हो।।4।।

ताको भेद सुनो भाई सन्तो, अब हम कहैं अस्थाई ।

ही नाम को निशदिन सुमरे, ताको काल न खाई हो।।5।।

कहें कबीर अगम की वाणी, पूरे गुरू लखाई हो।

व शब्द सुरति जब एक भयो है, फिर नहिं जन्म धराई हो।।6।।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहेब की शब्दावली का यह शब्द मैं गवाही के रूप में रखता हूँ जो इस प्रकार है।

एक शब्द जो सारशब्द परमात्मा अगम अपार है उसके सच्चे भेद को कोई नहीं जानता। उस अगम और अपार पुरूष परमात्मा का ही महत्व है, अन्य का नहीं। सारशब्द परमात्मा के नीचे चैतन्य आत्मा परिचय देते है महाचैतन्य परम पुरूष परमात्मा के नीचे चैतन्य आत्मा विद्यमान है, अब उसके विषय में कहा जाता है कि चैतन्य आत्मा प्रकृति शून्य मण्डल के ऊपर रहता है। जब वही चैतन्य आत्मा अर्द्ध अर्थात प्रकृति मण्डल पिण्ड ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत अपनी सत्ता में व्याप्त होता है। तब वह जगत में जाहिर होता है अर्थात उसी चैतन्य आत्मा के माध्यम से यह जड़, पिण्ड और ब्रह्माण्ड में अपनी चेतन शक्ति को व्याप्त करके जड़ शरीर के माध्यम से प्रतीत हो रहा है। परन्तु उस चैतन्य आत्मा को कोई जानता नहीं।

ऐसे चैतन्य आत्मा को भेदी सद्गुरू के कौन बता सकता है? करोड़ों प्रकार के जप, तप आदि करके थकही क्यो न जाये, किन्तु बिना किसी भेदी गुरू के चैतन्य आत्मा के सम्बन्ध में कोई भी व्यक्ति बता सकने में समर्थ नहीं है। इसलिए सद्गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि मैंने अपने मुख से करोड़ों प्रकार की शब्द वाणियाँ कहीं है। परन्तु मैने समस्त वाणियों वाणियों से उसी सारशब्द परमात्मा का ही गान किया है। उस सारशब्द परमात्मा के वास्तविक भेद की काल पुरूष निरंजन नहीं प्राप्त कर पाता। है, यदि वह जान जाये तो सृष्टि के बन्धन से छुटकारा पा जाये तथा उसकी परमात्मा के स्वरूप में स्थिति हो जाये एवं वह सृष्टि के उत्पत्ति प्रलय के बन्धन से भी छुटकारा पा जाये।

भेदी गुरू के मिलने पर कोई संत जन ही उनमें चित्त लगाते हैं, अर्थात ध्यान करते हैं। जो चैतन्य आत्मा माया मण्डल के ऊपर विद्यमान है, उसी से पाँच तत्व तीन गुण अंश रूप में उत्पन्न हुए है। उस चैतन्य आत्मा के आगे जो महा चैतन्य सारशब्द परमात्मा है जिसके प्रति सद्गुरू कबीर साहेब ने "शब्द एक अगम अपारा" से संकेत किया है वह सबसे अलग एवं न्यारा है। उससे इस मायिक पंच भौतिक विश्व प्रपंच की उत्पत्ति नहीं होती। अतः वह समस्त प्रपंचों से रहित अखण्ड एक स्थिति परमानन्द में रहता है। यह चैतन्य आत्मा जो उर्द्ध में रहती है, जिसमें पाँच तत्व, तीन गुणों का विस्तार हुआ है। वह अकह अकार रूप चैतन्य ज्ञानमय है, किन्तु सत्यपुरूष महाचैतन्य निः अक्षर रूप "सारशब्द" परमात्मा है। वही महाचैतन्य परमात्मा हमारा वास्तविक मूल स्वरूप है ऐसा सद्गुरू कबीर साहेब कहते हैं।

सद्गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि उस सारशब्द परमात्मा का जो वास्तविक भेद है उसको हे सन्तों तथा जिज्ञासु जनों आप सभी ध्यानपूर्वक सुनो। अब उसके सम्बन्ध में विवेचन करके विस्तारपूर्वक कहता हूँ कि जो जिज्ञासु उस विदेह नाम सारशब्द महाचैतन्य परमात्मा को दिन-रात स्मरण करता है ऐसे भक्त जिज्ञासु को काल नहीं खा सकता। सद्गुरू कबीर साहेब कहते हैं कि महाचैतन्य परमात्मा का परिचय कराने वाली यह हमारी वाणी है।

अतः उस परमात्मा की प्राप्ति के विशुद्ध भेद को कोई पूरा भेदी गुरू ही लखा सकता है। जब उस विदेह सारशब्द परमात्मा में जिज्ञासु साधक की सुरति

एकाकार हो जाती है फिर उसको जन्म-मरण के बन्धन में फिर नहीं बँधना पड़ता है अर्थात वह मुक्त हो जाता है।

शब्द

आशा है निज नाम की, निश दिन गुजरना हो।

कायागढ़ जागीर है. सद्गु– परवाना हो। टेक।।

यम अमल पावै नहीं, भव फिरत भुलाना हो।।1।।

काया नगर में बोलता, कोई देखा भाई हो।

तिनका ओट पहाड़ है, तासे नजर न आई हो।।2।।

शब्द कमान सतगुरू दिया, तानै कोई शूरा हो।

सुरति का तीर लगाय के, मारै कोई पूरा हो।।3।।

शब्द स्वरूपी साहेब, सब माँहि समाना हो।

केवल ज्ञान कबीर का, विरले जन जाना हो।।4।।

शब्द : जिस जिज्ञासु साधक को निज आत्म स्वरूप सारशब्द पमात्मा की आशा निरन्तर ध्यान की स्थिति बनी रहती है और दिन रात उसी सार शब्द परमात्मा में ही अपनी स्थिति रखता है, तो ऐसा साधक कायागढ़ में सदैव जागृत एवं सावधान रहता है। ऐसे जिज्ञासु जनों के हृदय में परम पुरूष परमात्मा का सदैव जागृत एवं ध्यान रहता है। ऐसे जिज्ञासु जनों के हृदय में परम पुरूष परमात्मा का सदैव, प्रमाण रहता है, अर्थात निरन्तर लक्ष्य पर स्थिर रहता है। जिस काल निरंजन के घेरे में संसार का जीव भूला हुआ फिरता है। किन्तु जब परमात्मा के भेदी सद्गुरू द्वारा साक्षात्कार हो जाता है। तब काल निरंजन उस पर शासन नहीं कर पाता है। हे संसार के जीवों काया नगर के अन्तर्गत जो बोल रहा है अर्थात जिसके माध्यम से वाणी व सम्पूर्ण शरीर चैतन्य हो रहे हैं। क्या उस चैतन्य आत्मा को किसी ने देखा है? जीव तो अपने आत्मस्वरूप व परमात्म स्वरूप को भूल जाने से तिनके की ओट में वह परमात्मा पहाड़वत प्रतीत हो रहा है। इसी कारण वह परमात्मा अपने समीप होते हुए भी लक्ष्य में नहीं आ पाता अर्थात उसका साक्षात्कार नहीं होता। जिस जिज्ञासु को किसी भेदी सद्गुरू को

यदि 'अ' अर्थात आत्म स्वरूप का संकेत कराके परिचय करता है वही जिज्ञासु शूरवीर को सुरति का तीर लगाकर मूल लक्ष्य सारशब्द परमात्मा का साक्षात्कार कर पाता है। अर्थात ऐसा जिज्ञासु ही कह आकार का प्रतीक 'अ' की कमान पर सुरति रूपी तौर से लक्ष्य रूपीनिः अक्षर आकार का परमात्मा का भेदन करता है। वह निःअक्षर महा चैतन्य सारशब्द परमात्मा निःअक्षर आकार शब्द स्वरूप जो साहेब है वहाँ सभी आत्माओं में नित्य-निरन्तर समया हुआ है। अर्थात सदा सनातन सभी आत्मओं में ओत-प्रोत है। कबीर साहेब कहते हैं कि हमारे इस निर्मल विशुद्ध ज्ञान को कोई भी जिज्ञासु साधक किसी सच्चे भेदी सद्‌गुरू के द्वारा ही जान सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य किसी के द्वारा किसी भी किसी प्रकार से जान पाना सम्भव नहीं है।

कबीर साहेब की शब्दावली का शब्द

संतों सहज समाधि भली है।

गुरू प्रताप जा दिन से जागी, दिन-दिन अधिक चली है।।1।।

जहँ-जहँ डोलो सो परिकरमा, जो कुछ करो सो पूजा।

गिरही उजाड़ एक सम देखो, भाव मिटाओ दूजा।।2।।

आँख न मूँदो कान न रूधो, तनिक कष्ट नहि धारो।

खुले नयन पहिचानो, हँसि-हँसि सुन्दर रूप निहारो।।3।।

शब्द निरन्तर से मन लागा, मलिन वासना त्यागा।

ऊठत बैठत कतहूँ न छूटै, ऐसी ताड़ी लगा।।4।।

कहत कबीर सहज अति रहनी, सो परकट करि गाई।

दुःख सुख से कोई परे परमपद, सो पद है सुखदाई।।5।।

टीका : सद्‌गुरू कबीर साहब कहते हैं हे सन्तों अर्थात हे जिज्ञासु जनों उस महाचैतन्य सारशब्द परमात्मा की प्राप्ति के लिए चैतन्य ज्ञान समाधि ही सर्वोत्तम है। अभ्यासी साधक की अन्तर दशा का सच्चा चित्रण सद्‌गुरू कबीर साहेब इस प्रकार कह रहे हैं।

गुरू कृपा से हमारी सुरित जिस दिन से जाग गई और सारशब्द परमात्मा

में लग गई उस दिन से दिन-प्रतिदिन अधिक से अधिक बढ़ती ही जा रही है और जब उस सारशब्द परमात्मा में स्थिति हो गई, तब उस साधक की यह दशा होती है।

जहाँ-जहाँ मैं उस सारशब्द परमात्मा के चिन्तन ध्यान में विचरण करता हूँ वह सब हमारी परिक्रमा है और जिस रूप में उसका ध्यान चिन्तन करता हुँ, वही हमारी पूजा है। ऐसे साधक के गृहस्थ आश्रम की दशा जंगल के समान हो जाता है। इस सहज चैतन्य समाधि के साधन में आँख, कान आदि मूँदने की आवश्यकता नहीं है अर्थात जड़ कारणों का सहारा नहीं लेना पड़ता है और न ही किंचित शारीरिक कष्ट उठाना पड़ता है। सुरति ज्ञान नेत्रों के खुलने पर साहेब का साक्षात्कार हो जाता है तथा शारीरिक सभी अणु-परमाणु सारशब्द की अनुभूति में गद्‌गद् हो जाते हैं। जब उस सारशब्द परमात्मा में निरन्तर ध्यान लग जाता है, तो मन के अन्दर बसने वाली समस्त मलिन वासनायें अपने आप समाप्त हो जाती है।

फिर ऐसे साधक की यह दशा हो जाती है कि उठते-बैठते, चलते-चलते सारशब्द की स्थिति कभी टूटती नहीं। ऐसे साधक का सारशब्द परमात्मा में अखण्ड ध्यान लग जाता है। कबीर साहेब कहते हैं कि वह उस सहज चैतन्य समाधि चैतन्य समाधि की साधन प्रक्रिया है, जिसमें प्रत्यक्ष रूप में साधकों के कल्याणार्थ मैंने स्पष्ट रूप में कह दी है। उस सारशब्द परमात्मा का परमानन्द सांसारिक दुःख-सुख से सर्वथा परे है। वह सारशब्द परमात्मा ही सच्चा सुख प्रदान करता है अर्थात परम शान्ति देने वाला है।

चौपाई

एकै ब्रह्म और नहीं कोई, सर्वत्र रमा कबीर है सोई।।1।।

नहीं कबीर नहीं धर्मदासा। अक्षर एक सब घटहिं निवासा।।2।।

वाही को सत्पुरूष कहिए। आदि अन्त अक्षर होय रहिए।।3।।

तुम धर्माणि अक्षर सत्य मानो। दूजी बात न मनकछु आनो।।4।।

टीका : इस प्रकृति माया मण्डल के अन्तर्गत एक ब्रह्म चैतन्य आत्मा ही सर्वप्रधान है अर्थात पाँच तत्व, तीन गुण, पच्चीस प्रकृतियाँ तथा बावन अक्षरों का

प्रकाशकसाक्षी दृष्टा ब्रह्म ही आत्मा है। उस चैतन्य आत्मा के अतिरिक्त ओहं, सोहं, रंरकार आदि जड़ शब्द पदार्थ कोई भी उससे प्रधान नहीं है। वह चैतन्य प्रत्येक घटों में रमा हुआ है। आत्मा चैतन्य जैसा स्वरूप सद्गुरू कबीर का भी है अर्थात चैतन्य आत्मा का स्वरूप अकह आकार रूप है। यह जीवात्म आत्म सत्ता से जड पदार्थों में लिप्त होने का अन्तर है।

नाम एवं रूप दोनों ही इन्द्रियगत होने के कारण पाँच तत्व एवं बावन अक्षरों के अन्तर्गत है। आत्मा इन सब से परे शुद्ध स्वरूपमय है। इस भूमिका के आगे सद्गुरू कबीर शुद्ध आत्म भूमिका की वर्णन करते हैं।

नाम रूप से परे जो आत्म का शुद्ध स्वरूप है, उसे न तो कबीर कहा जाता है और न धर्मदास, न राम, न कृष्ण, न ब्रह्मा, न विष्णु, न शिव आदि। अर्थात वह शुद्ध निर्लिप्त आत्मा नाम एवं दोनो से सर्वथा परे हैं।

एक अक्षर चैतन्य आत्म तत्व प्रत्येक घट व्याप्त हो रहा है। वह नाम रूपों का प्रकाशक होता हुआ भी नाम रूपों से पूर्णतया भिन्न है। वह शुद्ध चैतन्य आत्मा स्व स्वरूप से भिन्न होने पर भी स्वरूप को मोह में लिप्त होने के कारण नाम रूप को वह स्वयं का स्वरूप समझ बैठी है। यही नहीं इन नाम रूपों को को ही अपना स्वामी उद्धार कर्ता भी मान लिया है। इस नाम से परे शुद्ध चैतन्य आत्मा को ही सत्पुरूष कहते हैं। सृष्टि के उत्पत्ति के पूर्व और सृष्टि के प्रलय के पश्चात आत्मा सदैव उसी रूप में रहता है। उसका कभी विनाश नहीं होता और न ही उत्पत्ति होती है।

कबीर साहेब कहते हैं कि ऐ धर्मदास उस अक्षर आत्मा को ही सत्य समझो। चैतन्य आत्मा के अतिरिक्त जड़ पदार्थों की रचना हुई है, जो परिवर्तनशील तथा विनाशी है। यह चैतन्य आत्मा उर्द्ध रहता हुआ भी सुरति के द्वारा अर्द्ध होने से मन के प्रकृति के बन्धन में पड़ गया है। इसी कारण सारशब्द परमात्मा चैतन्य आत्मा के स्वरूपगत होने के बावजूद भी दृष्टिगत नहीं हो रहा है। इतना ही नहीं चैतन्य आत्मा की सुरति व स्वरूप से हटकर मन एवं शरीर के इन्द्रियों और जड़ पदार्थों में इतनी अधिक लिप्त हो गई है कि उसे स्व स्वरूप का बोध ज्ञान यानी ख्याल नहीं रहा।

साखी

सुरति फँसी संसार में, तासै पड़गी दूर।

सुरति बाँधि स्थिर करो, आठों पहर हुजूर।।1।।

अक्षय होय अक्षर गहै, अक्षर है उपदेश।

अक्षय डोरि चढ़ी जायजिव, अक्षय् राज के देश।।2।।

टीका : हे जिज्ञासु जनों ध्यानपूर्व सुनो, आप किसी भेदी सद्गुरू की शरण में जाकर अपने चैतन्य आत्म स्वरूप को जानो तथा जब भली प्रकार समझ में आ जाये, तब अपनी सुरति को ऊर्द्ध करके संसार से हटाकर दशम द्वार पर केन्द्रित करने का प्रयास कर आत्मस्वरूप में स्थिर करो, ऐसा करने से वह परमात्मा आठों पहर निरन्तर तुम्हें अपने निकट ही दिखलाई देता रहेगा। जो साधक उस अक्षर सारशब्द परमात्मा को अपनी सुरति के द्वारा पकड़ लेता है तो वह जन्म-जन्म के बन्धन से छूट जाता है। कबीर साहब कहते हैं कि मेरा उपदेश उसी सारशब्द परमात्मा की प्राप्ति का है। जब वह जीव उस अक्षय डोर को पकड़ कर महाचैतन्य सारशब्द में स्थिर कर लेता है, तो सदा के लिए अक्षय राज्य की प्राप्ति कर स्वयं परमात्म स्वरूप में मिल जाता है।